भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

1939 में स्थापित भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ का उद्देश्य व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता में, शिक्षा के माध्यम से अभिवृद्धि करना है, जिसे यह निरन्तर एवं आजीवन प्रक्रिया के रूप में देखता है। संघ प्रौढ़ शिक्षा को एक प्रक्रिया, कार्यक्रम और आन्दोलन के रूप में गतिशील बनाने की दिशा में प्रतिबद्ध है। संघ प्रौढ़ शिक्षा के प्रसार में कार्यरत स्वंयसेवी संगठनों, विश्वविद्यालयों, शासकीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्यकलापों से समन्वय करता है। संगोष्ठियों एवं सम्मेलनों का आयोजन और प्रौढ़ शिक्षा के विभिन्न आयामों पर निरंतर सर्वेक्षण तथा शोध के साथ, संघ अपने सदस्यों की प्रौढ़ शिक्षा विषयक जानकारी में नवीनता एवं प्रखरता बनाए रखने के लिए समूचे विश्व में अद्यतन विचार और अनुभव प्रस्तुत करने का निरन्तर प्रयत्न करता रहता है। प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्रों में अनुसंधान हेतु विभिन्न प्रयोगात्मक परियोजनाएं भी संचालित करता है। अपनी नीतियों के अनुसरण में संघ ने 'नेहरू साक्षरता पुरस्कार' एवं महिलाओं में निरक्षरता निवारण कार्य हेतु 'टैगोर साक्षरता पुरस्कार' की स्थापना की है।

डा. जाकिर हुसैन स्मृति व्याख्यान प्रतिवर्ष किसी मूर्धन्य शिक्षाविद् द्वारा दिया जाता है। संघ हिन्दी एवं अंग्रेजी शोध कार्य के लिए डा. मोहन सिंह मेहता फेलोशिप भी प्रदान करता है। संघ का अमरनाथ झा पुस्तकालय प्रौढ़, सतत् और जनसंख्या शिक्षा की सन्दर्भ सामग्री की दृष्टि से देश में अद्वितीय है। विविध सन्दर्भ पुस्तकों के संकलन के अतिरिक्त देश और विदेश से प्रकाशित प्रौढ़ शिक्षा संबंधी पत्र–पत्रिकाएं, सूचना एवं संदर्भ सामग्री भी इसमें उपलब्ध है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्य हेतु संघ की पहल पर प्रौढ़ एवं जीवनपर्यन्त अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान (इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडल्ट एंड लाईफलॉंग एजूकेशन) की स्थापना हुई। संघ प्रौढ़ शिक्षा विषय पर अनेक पुस्तकें व पत्रिकाएं प्रकाशित करता हैं, जो कि मुख्यतः प्रौढ़ शिक्षा कर्मियों और नवसाक्षरों के लिए है। संघ 'इण्टरनेशनल फेडरेशन आफ वर्कर्स एजूकेशन एसोसिएशन्स', एवं 'एशियन साउथ पेसेफिक एसोसिएशन फॉर बेसिक एण्ड एडल्ट एजूकेशन', 'इण्टरनेशनल कौंसिल आफ एडल्ट एजूकेशन' तथा 'इण्टरनेशनल रीडिंग ऐसोसिएशन' से भी सम्बद्ध है। संघ की सदस्यता उन सभी व्यक्तियों एवं संस्थाओं के लिए खुली है जो इसके आदर्शों एवं लक्ष्यों में विश्वास रखते हैं।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

17–बी इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, महात्मा गांधी मार्ग, नई दिल्ली–110002
दूरभाषः 011–23379282, 23378436, 23379306
फैक्सः 011–23378206, ई–मेलः directoriaea@gmail.com
website: www.iaea-india.org; www.iiale.org

प्रौढ़ शिक्षा

अप्रैल–मई 2013
वर्ष 57 अंक 3–4

सम्पादक मण्डल

प्रो. भवानीशंकर गर्ग

ए.एच.खान
डा.एल.राजा
डा. मदन सिंह
इन्दिरा पुरोहित
दुर्लभ चेतिया
मृणाल पंत
के.आर.सुशीले गौडा

सहायक सम्पादक

बी. संजय

इस अंक में

सम्पादकीय 2

श्री अनिल बोर्डिया की स्मृति में 3
– एल. मिश्रा

ग्रामीण नेतृत्व क्षमता विकास– प्रभावी उपागम एवं उपाय (उत्तराखण्ड के परिप्रेक्ष्य में) 15
– एस एस रावत

कन्या भ्रूण हत्या – मानव जाति पर प्रहार (राजस्थान राज्य के विशेष संदर्भ में) 21
– पुष्पेन्द्र सोलंकी

शिक्षित एवं अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन 34
– ब्रजेश कुमार वर्मा

मूल्यः 100 रूपये वार्षिक

पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचार उनके वैयक्तिक विचार हैं जिनसे संघ एवं सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं है ।

पर्यावरण विमर्श

जून 2013 में उत्तराखण्ड में आयी प्राकृतिक आपदा से हुई भारी तबाही ने विकास और पर्यावरण के आपसी संबंधों पर देश के बौद्धिक जगत में हो रहे विमर्श को एक बार फिर से केंद्र में ला दिया है। विनाश और बचाव पर लगातार खबरें प्रकाशित करने के साथ–साथ बड़ी संख्या में वैचारिक लेख भी सभी समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए हैं। इस विमर्श की दिशा क्या है? देश का जनमानस इस विमर्श की परिणिति के तौर पर क्या चाहता है यह सभी जानना चाहते हैं। इसी इच्छा से समाचार पत्रों को खँगालने पर पता चला कि 17 जून, जिस दिन प्रातःकाल बाढ़ ने उत्तराखण्ड में भारी तबाही मचायी, से 30 जून के बीच में केवल जनसता में ही सम्पादकीय को छोड़ दस से ज्यादा वैचारिक लेख तथा स्तम्भ प्रकाशित हुए हैं। इन लेखों और स्तम्भों में विचार व्यक्त करने वालों में वरिष्ठ पत्रकार, स्तंभकार, पर्यावरणविद तथा अर्थशास्त्री शामिल हैं।

सभी विचारक इस बात पर सहमत हैं कि उत्तराखण्ड में जो कुछ भी हुआ वह प्राकृतिक आपदा था। पर इस बात पर भी सभी की सहमति है कि विनाश का जो मंजर उत्तकाशी, केदारनाथ, रूद्रप्रयाग, चमोली, पिथौरागढ, अल्मोड़ा और बागेश्वर इलाके में दिखा वह विकास के नाम पर राज्य के पहाड़ और नदियों का जो जमकर दोहन हुआ है उसी का परिणाम है। यह सभी मानते हैं कि विकास आवश्यक है और उसके उत्तरोतर गति को रोका भी नही जाना चाहिए पर यह विकास प्रकृति के साथ सामंजस्य रहित कतई नहीं हो सकता। विदित है कि जब उत्तराखण्ड उत्तर प्रदेश में था तो वहां जंगल काटने पर पूरी तरह पाबंदी थी। उस समय भागीरथी और अलकनंदा के तटों पर होटल बनाना तो दूर एक झोपड़ी भी बनाने की इजाजत नहीं थी। लेकिन अलग राज्य बनने के बाद राज्य के रहनुमाओं ने विकास के नाम पर प्रदेश के प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की खुली छूट दे दी जिसे किसी भी प्रकार से जायज नहीं ठहराया जा सकता। उत्तराखण्ड के ही एक मंत्री की माने तो 10 हजार से भी ज्यादा लोग एक झटके में काल की गोद में समा गये। जान–माल के हानि का आकार इतना बड़ा है कि लगभग एक माह होने चला अभी तक किसी आधिकारिक आंकलन की घोषणा नहीं हो पायी है।

सवाल उठता है कि क्या प्रकृति के साथ सामंजस्य रखते हुए विकास कार्य को वास्तविक स्वरूप नहीं प्रदान किया जा सकता? विश्व के कई हिस्सों में देखें तो पता चलता है कि विकास के साथ–साथ पर्यावरण की रक्षा हो सकती है। कई विकसित देशों में नदियां भी साफ हैं और समुद्र के तट पर बड़े–बड़े शहर पर्यावरण को बिना कोई नुकसान पहुचाएं उन्नत खड़े हैं। तवलीन सिंह ने लिखा है कि पहाड़ों में शहरीकरण से यदि खतरा होता तो स्विटजरलैंड जैसे देश का धरती पर कोई अस्तित्व नहीं बचता। वस्तुतः समस्या विकास से नहीं अनियंत्रित और उच्छश्रृखल विकास से है। खतरा सडकों के निर्माण से नहीं निर्माण का काम ऐसे ठेकेदारों को सौंपे जाने से है जिन्हें पहाड़ी क्षेत्रों में निर्माण का पर्याप्त अनुभव नहीं है।

उत्तराखण्ड तो एक नव गठित राज्य है। यहां उत्तम तकनीकी पर आधारित योजनाबद्ध विकास की आवश्यकता है। साथ ही साथ बारबार हो रहे प्राकृतिक आपदाओं से मानव विकास और प्रकृति के सह–संबंध को भी समझने की आवश्यकता है। आवश्यकता है राज्य के जनमानस को प्राकृतिक आपदा प्रबंधन में दक्ष करने की। यह तभी सम्भव हो सकता है जब सरकारी प्रयासों के साथ कदम से कदम मिला गैर सरकारी प्रयास भी किए जाएं। उत्तराखण्ड चिपको आंदोलन की भूमि है। यहां का समाज प्राकृतिक आपदाओं को मात देकर विकास की राह पर फिर से आगे बढ़ेगा इसमें कोई संदेह नहीं है।

–बी.संजय

श्री अनिल बोर्डिया की स्मृति में

(1934-2012)

– एल. मिश्रा

अगस्त 19, 1987 का दिन था जब मैंने भारत सरकार के संयुक्त सचिव के पद एवं वेतनमान पर मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के शिक्षा विभाग में संयुक्त शिक्षा सलाहकार का पदभार ग्रहण किया। तब मुझे ना हीं इस नियुक्ति के तात्कालिक संदर्भ का ज्ञान था और ना हीं इस दायित्व में अंतर्निहित चुनौतियों का भान था। वर्षों बाद 22 जुलाई 2011 को कॉउसिल ऑफ सोसल डेवेलपमेंट के प्रांगण में सेज प्रकाशन द्वारा प्रकाशित मेरी पुस्तक 'ह्यूमेन बॉडेज – ट्रेसिंग इटस रूटस इन इंडिया' पर हो रही एक चर्चा के दौरान स्वयं श्री अनिल बोर्डिया के शब्दों से मैं जान पाया कि उपरोक्त पद पर मेरी नियुक्ति के पीछे किसी और का नहीं बल्कि स्वयं श्री बोर्डिया का ही प्रयास शामिल था। इस पद पर नियुक्ति के बाद मेरे ऊपर प्रौढ़ शिक्षा सहित भारतीय भाषाओं तथा संस्कृति का कार्य सौंपा गया। मेरी पृष्ठभूमि श्री बोर्डिया से भिन्न थी। श्री बोर्डिया भारत सरकार के संयुक्त सचिव के तौर पर प्रौढ़ शिक्षा का पदभार संभाल रहे थे तथा राजस्थान में शिक्षा निदेशक थे। वे एक उच्च शिक्षित परिवार से आते थे। स्वयं उनके पिता स्व. श्री दादा भाई बोर्डिया राजस्थान में उच्च शिक्षा विभाग के निदेशक थे। जबकि मैं ना हीं कोई शिक्षाविद् था और ना हीं कोई शिक्षाकर्मी। मेरी योग्यता शायद ही एक प्रवक्ता के तौर पर इस दायित्व को ग्रहण करने लायक थी। पर मेरे लिए यह बड़े सौभाग्य कि बात थी कि संदर्भ और अवसर के बारे में बिना किसी पूर्व जानकारी के मुझे यह चुनौती सौंपी गयी थी। आगे चलकर मैं इस नियुक्ति के विशेष संदर्भ को जान पाया। वास्तव में (1) राष्ट्रीय साक्षरता मिशन पूर्व प्रधानमंत्री स्व. श्री राजीव गांधी के पांच तकनीकी मिशनों में से एक था जिसकी घोषणा देशभर में हो चुकी थी (2) सरल शब्दों में बिंदुवार लिखित 'राष्ट्रीय साक्षरता मिशन' शीर्षक दस्तावेज जो अब तक प्रकाशित उत्कृष्ठ सरकारी प्रकाशनों में से एक मानी जाती है वह भी जारी हो चुकी थी तथा (3) इस मिशन पर कैबिनेट के लिए तैयार एक नोट सभी संबद्ध मंत्रालयों एवं विभागों को भेजा जा चुका था (विदित हो कि आगे चलकर कैबिनेट ने इस नोट को अपनी संस्तुति प्रदान कर दी थी)। आगत चुनौतियों का आभास दिलाने के लिए ये संदर्भ पर्याप्त थे।

व्यक्तिगत एवं कार्यालयीन दोनों हीं दायित्वों के निर्वहन की दृष्टि से मेरे लिए यह एक कठिन दौर था। यद्यपि मैं तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्री राजीव गांधी के पांच तकनीकी मिशनों में से एक का नेतृत्व करने आया था बावजूद इसके लंबी प्रशासनिक प्रक्रियाओं के कारण मुझे सात से आठ महीनों तक कोई सरकारी आवास मुहैया नहीं कराया जा सका। विदित हो कि एक उच्च पदस्थ सरकारी अधिकारी के लिये प्रतिक्षा के इस काल को एक लंबी प्रतीक्षा का काल माना जाएगा। ऐसे में भुवनेश्वर से आकर मुझे फरवरी 1988 तक का समय अपनी पत्नी और बेटी के साथ ओडिशा भवन के एक छोटे से कमरे में बिताना पड़ा जिसके

चलते मुझे व्यक्तिगत एवं कार्यालयीन दायित्वों के निर्वहन में भी तमाम असुविधाओं का सामना करना पड़ा।

मेरे ऊपर मात्र प्रौढ़ शिक्षा का ही दायित्व नहीं था। मुझे भारतीय भाषाओं (संविधान के आठवें अनुच्छेद के अंतर्गत आने वाले 22 भाषाओं) तथा संस्कृत जिसके तहत कई राष्ट्रीय संस्थान यथा (1) इंस्टीट्यूट ऑफ इंगलिश एण्ड फॉरेन लैंगवेजेज, हैदराबाद (2) सैण्ट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ लैंगवेजेज, मैसूर (3) सैण्ट्रल हिन्दी डायरेक्टरेट, आगरा (4) राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली (5) लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली तथा ऐसे ही सात अन्य विद्यापीठ आते हैं, का कार्य देखना था। परिस्थितियां तब और जटिल हो गयीं जब मुझे स्थापित मान्यताओं से हटकर अपने ऊपर के कई अधिकारियों जैसे प्रोफेसर कीरीट जोशी, विशेष सचिव, मानव संसाधन विकास मंत्रालय तथा श्रीमती कृष्णा साही, केन्द्रीय राज्य मंत्री, भारतीय भाषाएं एवं संस्कृत, श्री अनिल बोर्डिया, सचिव तथा स्व. श्री पी.वी. नरसिम्हां राव, केन्द्रीय मंत्री, प्रौढ़ शिक्षा तथा श्री सैम पित्रोदा, प्रधानमंत्री सलाहकार, अशिक्षा उन्मूलन हेतु तकनीकी मिशन को साथ–साथ रिपोर्ट करना पड़ता था। इससे समय प्रबंधन में गंभीर समस्या तो होती ही थी, इतने व्यापक स्तर पर निरीक्षण एवं नियमन होने के कारण प्रशासन के मूलभूत सिद्धांत 'निर्देशों के एक्य' (यूनिटी ऑफ कमाण्ड) का भी उल्लंघन होता था।

इन सारे सीमितताओं के बावजूद मैं इस बात से वाकिफ था कि श्री बोर्डिया का ध्यान प्रमुखतः प्रौढ़ शिक्षा एवं राष्ट्रीय साक्षरता मिशन पर केन्द्रित है और मुझे मुख्यतः इस मिशन को नेतृत्व प्रदान करने के लिए ही केन्द्रीय प्रतिनियुक्ति पर लाया गया है तथा कैबिनेट द्वारा स्वीकृत किये जाने एवं मिशन के लागू होने के उपरांत मुझे संजीदगी से इस कार्य का निर्वहन करना है। दायित्व ग्रहण करने के बाद के छः महीने मैंने उन बड़े राज्यों यथा बिहार (झारखंड समेत), मध्य प्रदेश (छत्तीसगढ़ समेत), उत्तर प्रदेश (उत्तराखण्ड समेत), राजस्थान, ओडिशा, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र तथा गुजरात जिनकी असाक्षरता में बड़ी हिस्सेदारी थी, के दौरा करने, भारत तथा एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के देशों में प्रौढ़ शिक्षा का इतिहास अध्ययन करने तथा विभिन्न राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों में शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा के विभिन्न मॉडलों पर समय–समय पर खासतौर से 1937 से 1985 के दौरान किये गये विशेष प्रयोगों के अध्ययन करने में लगाया। प्रधानमंत्री के सलाहकार तथा पांचों तकनीकी मिशनों के प्रभारी श्री सैम पित्रोदा विभिन्न राज्यों के राजधानियों में स्थित मिशन निदेशालयों में साथ–साथ दौरे का कार्यक्रम निर्धारित करते थे जिससे मुझे उन मजबूतियों, कमजोरियों, संभावनाओं तथा चुनौतियों की जानकारी भी प्राप्त हुई जिससे प्रौढ़ शिक्षा विशेषरूप से प्रभावित होती थी।

इस काल में कई ऐसी महत्वपूर्ण बातें हुईं जिन्होंने आने वाले महीनों में घटने वाली घटनाओं के स्वरूप को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। प्रथमतः यह अनुभूत किया गया कि (1) आम जनता के मन में कार्यात्मक प्रौढ़ साक्षरता के बारे में स्वतःस्फूर्त मांग पैदा किये बगैर सरकार द्वारा समर्थित और निर्देशित केन्द्र आधारित कार्यक्रमों की ना ही कोई उपयोगिता है और ना हीं वे ऐसे में कारगर सिद्ध होंगे (2) साक्षरता के लिये समाज को संघटित करने का जनादेश उस केन्द्रीय मंत्रालय अथवा विभाग को नहीं

सौंपा जाना चाहिए जो इस कार्य के लिये समुचितरूप से सुसज्जित न हो तथा (3) साक्षरता के लिये समाज को संघटित करने का कार्य सरकार के बाहर के सृजनात्मक शक्तियों एवं ऊर्जाओं के समागम के माध्यम से ही संभव हो सकता है जिसके तहत उन सभी सृजनात्मक सोच रखने वाले चिन्तकों, लेखकों एवं कलाकारों को एकत्रित किया जाना चाहिए जो इस हेतु संगीत लिख सकते हैं, उसे धुन दे सकते हैं तथा स्वयं मंच पर उसे प्रस्तुत कर असाक्षर प्रौढ़ों को साक्षरता की परिधि में शामिल होने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। इसी दौरान ब्राजील के महान प्रौढ़ शिक्षाविद् द्वारा रचित 'पेडॉगोजी ऑफ द आपरेस्ड (1972)' के अध्ययन से कई अन्य महत्वपूर्ण अुनभूतियां भी प्राप्त हुईं, यथा (क) प्रौढ़ शिक्षण महज कर्ता और कर्म के संबंध जैसा नहीं हो सकता (ख) इसका विस्तार महज बैंकिंग की अवधारणा द्वारा नहीं किया जा सकता जिसके तहत मनुष्य के दिमाग को खाली ग्राह्य समझ उसे अनावश्यक, गैर–जरूरी और गैर–महत्वपूर्ण सूचनाओं से भरने की कोशिश की जाती हो और (ग) शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों को स्वयं के जीवनरूपी पुस्तक से सवांद प्रक्रिया (डॉयलैक्टिकल मोड) के माध्यम से सीखना चाहिये।

प्रारंभ के पहले छः महीनों (अगस्त 1987 – जनवरी 1988) तक मेरे जेहन में यूनेस्को के संविधान की प्रस्तावना हीं गूंजती रही जिसका आशय था 'चूंकि युद्ध की शुरूआत मनुष्य के मस्तिष्क में होती है इसलिए शांति के आधारशिला की स्थापना भी मनुष्य के मस्तिष्क में ही करनी होगी'। बावजूद इसके कार्यात्मक प्रौढ़ शिक्षा की उपयोगिता पर विविध प्रकार के विचार रखने वाले मानव मन को किस प्रकार प्रभावित किया जाय और उसे अपेक्षित आकार दिया जाय इसका मेरे पास अबतक कोई सुराग नहीं था।

ज्यों–ज्यों हम आगे बढ़ते गये वैज्ञानिक और तकनीकी शोधों पर आधारित प्रौढ़ शिक्षा हेतु किसी सफल मॉडल को अपनाने की निरर्थकता धीरे–धीरे स्पष्ट होने लगी। निश्चित ही हमें अच्छे किस्म के ब्लैक बोर्ड, रोलर बोर्ड, स्लेट, चॉक, पेन्सिल, प्रिन्टिंग के उत्तम तकनीक द्वारा प्राप्त आकर्षक चित्रों तथा दृष्टि सम्पन्न पाठ्य सामग्री की आवश्यकता थी। पर ये सभी मिलकर भी ऐसे मानव मन का निर्माण करने के लिए पर्याप्त नहीं थे जो धरातल पर असंख्य असाक्षर लोगों को साक्षर बना कार्यात्मक साक्षरता से लाभ उठाने के लिए प्रेरित कर सके। सी.एस.आई.आर के सहायक महानिदेशक प्रो. राम अय्यंगार की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की समिति कई महीनों तक वैज्ञानिक एवं तकनीकी निष्कर्षों से ऐसी पद्धति विकसित करने की कोशिश करती रही जिससे लाभ से वंचित लोगों को फायदा पंहुचाया जा सके। समिति प्रो. अय्यंगार के नेतृत्व में लगातार बैठकें करती रहीं पर अंत तक उसे कोई खास सफलता हासिल नहीं हुई। ना हीं ब्लैक बोर्ड, स्लेट, चॉक, डस्टर, लालटेन, पैट्रोमैक्स लाइट की कोई उच्च स्वरूप विकसित हो सकी और ना ही पेटेन्टिंग करने के रूप में अथवा प्रौढ़ शिक्षार्थियों के मानस को प्रेरित करने या पढ़ने के लिए उत्साहित करने हेतु तकनीक विकसित करने के रूप में कोई स्पष्ट सफलता प्राप्त हुईं। विदित है कि एक ओर जहां देहरादून स्थित इंस्टीट्यूट ऑफ पेट्रोलियम किसी ऐसे लालटेन को विकसित करने में विफल रही जो धुआं न उगले तो दूसरी ओर पुणे स्थित नेशनल कैमिकल इंस्टीट्यूट धूल रहित ऐसे चॉक को विकसित करने में विफल रहा जो शरीर में कनकनाहट पैदा करने वाली आवाज न उत्पन्न करे।

अंततः मिशन निदेशालयों के दौरे के तहत मार्च 1988 के पहले सप्ताह में श्री सैम पित्रोदा जब थिरूअन्नतपुरम पंहुचे तो घटनाक्रमवश श्री एम.पी. परमेश्वरन जो कि ना केवल एक तेजस्वी नाभिकीय वैज्ञानिक थे बल्कि एक सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्यकर्ता के रूप में केरल शास्त्र साहित्य परिषद (केएसएसपी) से जुड़े हुए थे और केरल में साइलैण्ट वैली प्रोजेक्ट (जिसे पर्यावरण सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु समाज को संघटित करने का प्रशंसनीय उदाहरण माना जाता है) के पथप्रदर्शकों में एक थे, से मुलाकात हो गयी। उसके ठीक बाद शास्त्री भवन के मेरे कमरे में श्री परमेश्वरन से 'साइलैण्ट वैली' की तरह ही सम्पूर्ण साक्षरता के लिए जन अभियान की अवधारणा विकसित करने तथा उसके क्रियान्वयन हेतु रणनीति तय करने पर विस्तृत और गंभीर चर्चा हुई। एक लंबे आत्ममंथन एवं विचार–विमर्श के बाद हम सम्पूर्ण साक्षरता अभियान जिस प्रकार क्यूबा (1951–61), मायन्मार (1969–71), इथियोपिया (1974–79) तथा निकारागुआ (1985–87) में एक वास्तविकता बन सकी ठीक उसी प्रकार भारत में भी बन सके इस हेतु सृजनात्मक शक्तियों के समागम के रूप में भारत ज्ञान विज्ञान समिति (बीजीवीएस) को शामिल करने के विचार तक पंहुच पाये।

इस प्रकार 'सफलता से बड़ा कोई पुरस्कार नहीं है' की नीति वाक्य की दिशा में बढ़ते हुये एरनाकुलम में सम्पूर्ण साक्षरता अभियान की अवधारणा विकसित हुई। तब एरनाकुलम में साक्षरता दर 77 प्रतिशत था बावजूद इसके 6 से 60 वर्ष तक के आयुवर्ग में यहां तकरीबन 2 लाख असाक्षर लोग मौजूद थे। यह सोचा गया था कि यदि एक अभियान के तहत एरनाकुलम में सम्पूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त कर लिया जाय तो समूचे केरल में इस लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में एक ज्वार उत्पन्न होगा और यदि केरल राज्य में भी इस प्रकार सम्पूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त कर लिया गया तो सम्पूर्ण साक्षरता अभियान (टीएलसी) एक सफल मॉडल के रूप में उभर सकेगा जिसका अनुकरण पूरा देश करेगा।

वास्तव में हुआ भी ठीक ऐसा ही। 26 जनवरी 1989 को एरनाकुलम के दरबार हाल में प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री स्व. श्री ई.के. नयनार द्वारा एरनाकुलम जिले में सम्पूर्ण साक्षरता अभियान की शुरूआत की गयी। टीएलसी एरनाकुलम को एक तर्कसंगत परिणिति तक पंहुचने में मात्र एक वर्ष का समय लगा। इस दौरान 20 हजार स्वयंसेवी अनुदेशकों द्वारा तकरीबन 1,34,000 असाक्षर लोगों जिसमें 70 प्रतिशत महिलाएं थीं, को कार्यात्मक साक्षरता प्रदान की गयी। यह उल्लेखनीय उपलब्धि एरनाकुलम के तत्कालीन जिला कलेक्टर स्व. श्री के. एस. राजन के कुशल नेतृत्व में कार्य कर रहे समाज के कई रचनात्मक घटकों के सामूहिक प्रयासों के कारण हासिल हो सकी। स्व. प्रधानमंत्री श्री वी. पी. सिंह ने 4 फरवरी 1990 को एरनाकुलम को देश का पहला सम्पूर्ण साक्षर जिला घोषित किया। उसी दिन एरनाकुलम को छोड़ सम्पूर्ण केरल प्रदेश जिसमें कुल 13 जिले शामिल थे, में सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के प्रारंभ की घोषणा की गयी। 6 अप्रैल 1991 को सम्पूर्ण साक्षर केरल एक एतिहासिक वास्तविकता बन गया। इसी दिन एरनाकुलम के दरबार हाल के ठीक सामने खुले मैदान में प्रख्यात रचनाकार स्व. श्री बलराज साहनी के भाई श्री भीष्म साहनी, श्री एम. पी. परमेश्वरन, प्रो. मेनन सरीखे व्यक्तित्वों की उपस्थिति में आयोजित एक रंगारंग समारोह में सम्पूर्ण साक्षर

केरल राज्य की घोषणा की गयी। इसके साथ ही साथ पुड्डुचेरी, गोवा तथा पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, तमिलनाडू, आंध्रपद्रेश, ओडिशा, बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान और मध्य प्रदेश के 250 जिलों में सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के शुरूआत की घोषणा भी की गयी। इसी बीच मार्च 1993 को मैं राष्ट्रीय साक्षरता मिशन तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय से दायित्व मुक्त हो गया।

शेष सब कुछ इतिहास है। अब पीछे मुड़कर देखने वाली बात नहीं थी। हम सब जो इस प्रयोग के अभिन्न और अनिवार्य अंग थे उनके लिए यह एक रोमांचकारी अनुभव था। सभी जिलाधीश राष्ट्रीय साक्षरता मिशन प्राधिकरण के कार्यकारिणी द्वारा अपने जिले के लिए सम्पूर्ण साक्षरता अभियान की मंजूरी हेतु स्पर्धा करने लगे थे। इनमें से कई जिलाधीश जिस उमंग और उत्साह के साथ सम्पूर्ण साक्षरता अभियान की अवधारणा को अपने कार्य क्षेत्र में क्रियान्वित करने में लगे थे वह सचमुच अविश्वसनीय था जिसे देखे बगैर शायद ही विश्वास किया जा सकता। वास्तव में यह आजादी की दूसरी लड़ाई थी, लड़ाई करोड़ों असाक्षर लोगों को निरक्षरता के अभिशाप, शर्म और यंत्रणा से मुक्ति दिलाने की।

यदि सचिव, शिक्षा, मानव संसाधन विकास मंत्रालय के रूप में स्वयं श्री अनिल बोर्डिया निर्णय प्रक्रिया में शीर्षस्थ पद पर आसीन नहीं होते तो इतिहास आज कुछ और ही होता। भारतीय प्रशासनिक सेवा के सन् 1957 बैच से आये श्री बोर्डिया वरिष्ठ अधिकारी होते हुए भी अन्य लोगों से सर्वथा भिन्न थे। पहल एवं प्रवृति, दोनों ही नजरिये से वे पूर्णतया गैर–पारंपरिक और उदारवादी थे। वे सामान्यतया अपनाये जाने वाले पथ पर यूं हीं औपचारिक ढंग से चलने वाले व्यक्ति नहीं थे। मार्ग चाहे कितना भी कठिन और दुर्गम्य हो सफलता अर्जित कर लेने के उनके अपने हीं विचित्र तरीके थे। अजस्र ऊर्जा, अडिग आशावाद, आमजन के हितों के प्रति अचूक प्रतिबद्धता के धनी श्री बोर्डिया रूढ़िवाद तथा परंपरावाद के कठिन गलियारों से निकल कर भी सफलता अर्जित करने की अदम्य इच्छा रखते थे।

19 अगस्त 1987 से 31 मई 1992 तक का मेरा काल जो श्री बोर्डिया के सानिध्य में बीता वह मेरे प्रशासनिक सेवा (1964 से आगे) के पांच दशकों वाले कार्यकाल का बेहद चुनौतियों भरा पर सर्वाधिक उत्साह और यादगार का काल था। वैसा अनुभव मुझे अपने प्रशासनिक जीवन में दुबारा नहीं मिला।

उदाहरण के तौर पर सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के शुरूआत के पहले राष्ट्रीय स्तर पर कार्य करने वाले एक शीर्षस्थ संस्थान के रूप में भारत ज्ञान विज्ञान समिति गठित करने के विचार से जब मैं और डॉ. एम. पी. परमेश्वरन सहमत हो गये तो मैंने मौखिक एवं लिखित दोनों ही रूपों में श्री बोर्डिया को शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सक्रिय सहयोग एवं समर्थन से भारत ज्ञान विज्ञान समिति गठित करने के अपने विचारों से अवगत कराया। श्री बोर्डिया ने उक्त विचार के प्रति पूर्ण सहमति व्यक्त की और अपनी ओर से पूर्ण समर्थन भी प्रदान किया। निम्नलिखित के आधार पर उन्होंने पूरी निष्ठा एवं दृढ़ता के साथ इस प्रस्ताव को स्वीकृत किया थाः

- सामाजिक एकत्रीकरण तथा वातावरण निमार्ण के साथ सरकार न्याय नहीं कर सकती।
- एक ऐसी अवधारणा जिसकी स्वाभाविक परिणिति सम्पूर्ण साक्षरता अभियान हो, के साथ न्याय करने के लिए गठित यह समिति सृजनात्मक विचारकों, लेखकों तथा कलाकारों की एक प्रतिनिधि संस्था होगी।

- इस प्रकार की संस्था को सरकार न ही ठेकेदार और न ही वैकल्पिक अथवा स्वयं की प्रतिस्पर्धी संस्था मानेगी बल्कि यह समान तल पर कार्य करने वाली सरकार द्वारा किये गये पहल की सम्पूरक या प्रतिपूरक संस्था होगी।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय के विभागीय अध्यक्ष द्वारा मानवीय दृष्टिकोण भरी इस प्रकार की दृढ़ता और स्वीकृति के बगैर भारत ज्ञान विज्ञान समिति का जन्म संभव नहीं था और इस मुख्य उत्प्रेरक के अभाव में सम्पूर्ण साक्षरता अभियान शायद ही वास्तविक आकार ले पाता।

हमने लगभग पांच वर्षों तक लगातार एक साथ सोचा, योजनाएं बनाईं और साथ–साथ हीं उन्हें क्रियान्वित किया। सरकारी मंच हो या गैर–सरकारी, हमने एक ही आवाज में समान ऊर्जा, समान चेतना और समान उत्साह के साथ हर जगह अपनी बात रखी। इस दौरान सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के क्रियान्वयन संबंधित कई छोटी–छोटी बातों पर आकस्मिक मतभेद भी उभरे पर बहुजन के हित को ध्यान में रखते हुए हमने इन मतभेदों को बड़ी संजीदगी से सुलझाया।

उदाहरण के तौर पर निम्नलिखित मुद्दों पर हम हमेशा एक तल पर खड़े रहेः

- असाक्षरता अभाव है जबकि कार्यात्मक प्रौढ़ साक्षरता महिला या पुरूष को सम्पूर्णता प्रदान करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण उपादान।
- असाक्षरता अभिशाप नहीं है और न ही यह पूर्व निर्धारित है। जिस दृढ़ता, उत्साह और प्रतिबद्धता के साथ हमने चेचक तथा अन्य ऐसे ही अभिशापों का मुकाबला किया उसी दृढ़ता, उत्साह और प्रतिबद्धता के साथ हम असाक्षरता से भी लड़ सकते हैं और सफलतापूर्वक इसकी चपेट से बाहर आ सकते हैं।
- असाक्षर व्यक्ति न ही मूर्ख होता है और न ही मंदबुद्धि। ये सभी मौखिक साक्षरता, जमीनी विवेक और बुद्धिमता, व्यावहारिक अंतर्दृष्टि तथा विचार सम्पन्न होते हैं जो इनके जीवन को जीने लायक बना देते हैं। महज संवाद के प्रिंट माध्यमों तक पहुंच न होने के एवज में इन्हें नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। उनमें निःसंकोच सामर्थ्य एवं संभावनाएं होती हैं और साईं परांजपे की फिल्म 'अंगूठा छाप' में कोन्डिवा (भोला राम अठ्ठावले) जैसी दृढ़ता एवं प्रतिबद्धता के साथ वो सफलतापूर्वक कार्यात्मक साक्षरता के स्तर को प्राप्त कर सकते हैं।
- उम्र, सामाजिक पृष्ठ भूमि अथवा अन्य प्रकार की अपंगता एवं अभाव साक्षरता प्राप्ति की दिशा में कतई रूकावट नहीं है।
- सच्चे अर्थों में कार्यात्मक साक्षरता वह साक्षरता है जो व्यक्ति को अज्ञानता, अभिमान एवं ऐसे ही अन्य नकारात्मक मान्यताओं के कारण जन्मी पारंपरिक रूढ़ीवादों एवं पूर्वाग्रहों से मुक्त करती हो।
- कार्यात्मक साक्षरता रूढ़िवादी विचारों एवं मान्यताओं को तोड़ व्यक्ति में वैज्ञानिक दृष्किोण एवं समझ विकसित करती है। धर्मग्रन्थ आधारित साक्षरता जो रूढ़िवादी विचारों एवं मान्यताओं को पुष्ट करे ऐसी साक्षरता से सज्जित होने से बेहतर है कि देश और देशवासी असाक्षर हीं रहें।
- सच्चे अर्थों में कार्यात्मक साक्षरता वह साक्षरता है जो मनुष्यता को विभाजित करने वाली सभी प्रकार के विघटन एवं विभाजक तत्वों को रोकने में सक्षम हो तथा इसके माध्यम से समाज में मौजूद ऐसे सभी

कारकों को दूर किया जा सके जो किसी भी प्रकार का विभेद एवं पक्षपात उत्पन्न करती हों ताकि मनुष्य उत्तरोत्तर बेहतर एवं उत्कृष्ठ सोच की ओर बढ़ता हुआ विश्व को सभी प्राणियों के जीवनयापन के लिए एक बेहतर जीवन स्थान बना सके। मैं श्री अनिल बोर्डिया का स्मरण मार्च 1990 में जौमतियन (थाइलैंड) में हुए वर्ल्ड इ.एफ.ए सम्मेलन के दौरान प्रस्तुत ऋगवेद के इन स्वर्णिम पंक्तियों के साथ करता हूं:

संगच्छध्वं संवदध्वं
सं वो मनांसि जानताम
देवा भागं यथा पूर्वे
सम्यजानाना उपासते ।।

समानो मन्त्रः समितिः समानि
समानं मनः सहचित्तमेषाम्
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः
समामेन वो हविषा जुहोमि ।।

समानि व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।

शिक्षा के माध्यम से धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्रीय अखण्डता, साम्प्रदायिक सद्भावना जैसे राष्ट्रीय मूल्यों एवं पर्यावरण सुरक्षा और संरक्षण, छोटा एवं सुखी परिवार तथा उत्तरदायी अभिभावकत्व का प्रचार–प्रसार होना चाहिए, इस विचार के प्रति दृढ़ विश्वास एवं प्रतिबद्धता रखने वाले श्री बोर्डिया ने नवाचार तकनीक आईपीसीएल (इम्प्रूवड पेस एण्ड कन्टेंट ऑफ लर्निंग) पर आधारित कई उत्कृष्ठ प्राइमरों एवं अन्य पठ्न–पाठन सामाग्रियों के विकास की अवधारणा विकसित की। आईपीसीएल के तहत शिक्षा में उत्तरोत्तर विकास के सिद्धांत पर आधारित तीन प्राइमरों की रचना की गई जिन्हें प्राइमर एक, प्राइमर दो तथा प्राइमर तीन कहा जाता है। इसके अंतर्गत शिक्षा के एक चरण से दूसरे चरण तक जाने की अवधारणा शामिल थीं। इसमें असाक्षर व्यक्ति जैसे–जैसे शिक्षा के एक चरण से दूसरे चरण की ओर बढ़ता था उसे शिक्षित होने का उत्साह व आनन्द स्वतः ही प्राप्त होने लगता था। साथ–साथ उसके मनोबल, साहस तथा उत्तरोत्तर शिक्षा प्राप्त करने के आग्रह में भी बढ़ोतरी होती थी। प्रत्येक प्राइमर के अंतर्गत किये जाने वाले अभ्यासों की एक सूची होती थी जिसे हल करना सभी शिक्षार्थियों के लिए अनिवार्य था। ज्यों–ज्यों शिक्षार्थी अभ्यास पूरे करते जाते थे तथा प्राइमर में दिये गये सवालों को हल करते जाते थे स्वयं से शिक्षा प्राप्त करने के प्रति उनका मनोबल बढ़ता ही जाता था। इसी प्रकार सभी प्राइमरों के अंत में तीन प्रश्नपत्र भी संलग्न होते थे जिसके माध्यम

से स्वयंसेवक शिक्षार्थी के उपलब्धियों का मूल्यांकन करता था। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि जो शिक्षार्थी इन तीन प्राइमरों के तहत सभी नौ परीक्षाओं में उर्तीण होता था वह शिक्षा के प्रारंभिक स्तर को प्राप्त कर लेता था तथा उसमें पढ़ने, लिखने और सामान्य अंक गणित के सवाल हल करने की क्षमता विकसित हो जाती थी।

प्रथमतः प्रौढ़ शिक्षा विज्ञान के क्षेत्र में आईपीसीएल एक नवीन तकनीक थी जो कई कारणों से प्रशंसनीय रही। यह शिक्षा के उत्तरोत्तर विकास के सिद्धांत पर आधारित थी जिसके कारण अलग–अलग शिक्षार्थी अपनी क्षमता और योग्यता के अनुरूप अलग–अलग गति से विविध प्रकार की कुशलताएं हासिल कर सकते थे। हमारे शिक्षार्थियों की क्षमता विविध प्रकार की थी, कुछ तेजी से सीखते थे तो कुछ धीमे–धीमे। जिन शिक्षार्थियों की सीखने की गति अत्यन्त धीमी थी उनके लिए धैर्य, परिश्रम और पद्धति में अंतर्निहित लचीलेपन की आवश्यकता थी। उत्तरोत्तर विकास के सिद्धांत पर आधारित होने के कारण आईपीसीएल पद्धति इनके शिक्षण के लिए बहुत ही उपयुक्त साबित हुई।

दूसरा, आईपीसीएल के तहत शिक्षार्थी को प्रमुखता प्रदान की जाती है। यहां स्वयंसेवी अनुदेशक सहयोगी तथा उत्प्रेरक के रूप में पृष्टभूमि में रहते हुए नवसाक्षरों का सहयोग करता है। इस पद्धति के तहत स्व–शिक्षण तथा स्व–मूल्यांकन पर विशेष जोर दिया जाता है। दोनों ही प्रकार के शिक्षार्थी, चाहे वो तीव्र गति से सीखने वाले हों या धीमी गति से, ज्यों–ज्यों शिक्षा के एक पायदान से दूसरे पायदान की ओर बढ़ते हैं उनका साहस और कुछ नया सीखने के मनोबल दोनों में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है। तीसरा, आईपीसीएल उत्साहवर्द्धन शिक्षण पद्धति को बढ़ावा देता है। यहां यह विश्वास किया जाता है कि शिक्षा आनन्द और उत्साह का केन्द्र होना चाहिए न कि बोझिल और हतोत्साहित करने वाली प्रक्रिया। चौथा आईपीसीएल के तहत पढ़ने, लिखने तथा सामान्य अंक गणित के निर्धारित स्तर को भी किसी भी प्रकार से संकुचित नहीं किया जाता। हर चरण के अंत में प्राइमरों में दिये गये नौ परीक्षापत्रों के माध्यम से यहां शिक्षा को स्थाई स्वरूप प्रदान करने पर बल दिया जाता है।

यहां यह ध्यान रखना उचित होगा कि शिक्षण पद्धतियों के लिहाज से देखा जाय तो आईपीसीएल एकमात्र नवीन तकनीक नहीं है। ऐसी कई अन्य तकनीक भी प्रचलन में हैं जिनमें बहुत कुछ नया है। श्री बोर्डिया की यह मनसा कभी नहीं रही कि अन्य नवीन शिक्षण तकनीकियों को बाहर का रास्ता दिखा महज आईपीसीएल का ही प्रयोग किया जाय। उन्होंने आईपीसीएल की प्राथमिकता और केन्द्रीय भूमिका को कभी भी स्थायित्व प्रदान करने की कोशिश नहीं की । सच कहा जाय तो प्रख्यात प्रौढ़ शिक्षाविद् (एण्ड्रोगोजिस्ट) स्व. श्री मुश्ताक अहमद, स्व. श्री सत्येन मित्रा, स्व. डा. चित्रा नाइक, प्रो. अनिता दीघे, प्रो. सी. जे. दासवानी, श्री विनोद रैना, प्रो. एस. कृष्णकुमार और प्रो. अनिता रामपाल के वे गहरे प्रशंसक थे तथा राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के कार्यकारिणी बैठकों अथवा उसके बाहर सभी जगह श्री बोर्डिया इन सभी को बड़े सम्मान एवं आदर के साथ याद करते थे।

सच कहा जाय तो राज्य संसाधन केन्द्रों से उभर कर आये स्व. सत्येन दा, स्व. मुश्ताक साहब, स्व. चित्रा

ताई तथा रमेशभाई थानवी (एक लंबी सूची में से बताने के लिए कुछ नाम हैं जो राज्य संसाधन केन्द्र कलकत्ता, दिल्ली, पुणे और जयपुर के निदेशक रहे) जैसे मेधावी लोग मध्य सत्तर के दशक में श्री बोर्डिया के मानस पुत्र थे। यह वह समय था जब श्री बोर्डिया संयुक्त सचिव, प्रौढ़ शिक्षा, भारत सरकार के पद पर विराजमान थे। तब उन्होंने यह अवधारणा दी कि बंगाल सोशल सर्विस लीग, कलकत्ता, इण्डियन इनस्टीट्यूट ऑफ एजूकेशन, पुणे, राजस्थान एडल्ट एजूकेशन एसोसिएशन, जयपुर, आंध्र महिला सभा, हैदराबाद, साक्षरता निकेतन, लखनऊ, भारतीय ग्रामीण महिला संघ, इन्दौर, तमिलनाडू बोर्ड ऑफ नान फार्मल एजूकेशन, चैन्नई जैसे अच्छे, विश्वस्त एवं प्रतिबद्ध गैर–सरकारी संस्थाओं को समर्थन एवं प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ताकि वे राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम (एनएइपी) को आवश्यक अकादमिक एवं तकनीकी सहयोग प्रदान करे। यह सुखद स्मृति है कि 15 राज्य संसाधन केद्रों से आगे बढ़ आज देश में 33 राज्य संसाधन केन्द्र अपने पुर्नगठित स्वरूप में कार्यरत हैं तथा राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के नये अवतार 'साक्षर भारत' को अपना मौलिक सहयोग प्रदान कर रहे हैं।

सेवा मन्दिर, उदयपुर जैसे प्रख्यात गैर–सरकारी संस्थाओं के साथ अपने दीर्घकालीन संबंधों के चलते श्री बोर्डिया को यह विश्वास था कि (1) सरकार के पास उन लोगों तक पंहुचने के लिए पर्याप्त तंत्र नहीं है जो अभी भी पंहुच से बाहर हैं, (2) सरकार के संसाधन सीमित हैं और उस पर कई लोगों की दावेदारी है, (3) सभी कार्यों का दायित्व सरकार स्वयं के कधों पर नहीं ले सकती इसलिए सरकारी प्रयासों को गैर–सरकारी संस्थाओं का पूरक और प्रतिपूरक सहयोग चाहिए। जमीनी स्तर पर कार्यरत संस्थाओं के प्रति सम्मान और उनके अमूल्य योगदानों को पहचान देने की यह परंपरा एवं संस्कृति मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग द्वारा संचालित हर उस गतिविधि तक पंहुची जिसे श्री बोर्डिया ने नेतृत्व प्रदान किया।

श्री बोर्डिया के इन्हीं कल्पनाओं एवं दृष्टि के परिणामस्वरूप दिल्ली स्कूल लिटरेसी प्रोजेक्ट (डीएसएलपी) का प्रस्फुटन हुआ। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के लक्ष्य स्वरूप सन् 1990 तक 30 मिलियन असाक्षरों को साक्षर बनाना तथा अतिरिक्त 50 मिलियन लोगों को 1995 तक साक्षरता की परिधि में लाना किसी भी लिहाज से एक अत्यन्त कठिन कार्य था। 5 मई 1988 को तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्री राजीव गांधी द्वारा मिशन के उद्घाटन के साथ ही साथ हमने सिविल सोसाइटी के उन सकारात्मक एवं सक्रिय घटकों की तलाश शुरू कर दी जो गैर–परंपरागत एवं जमीनी स्तर पर संजीदगी से धर्मनिरपेक्षता, तार्किकता एवं वैज्ञानिक अवधारणा के साथ काम करते हुए मिशन को पूरा करने में सहयोग प्रदान कर सकें। तत्काल हमारी मुलाकात धौलाकुआं, नई दिल्ली स्थित स्प्रिंगडेल्स स्कूल के प्राचार्य श्रीमती रजनी कुमार से हुई जो तब पटेल एजूकेशन सोसायटी की अध्यक्षा भी थीं। युवा छात्रों को स्वयंसेवकों के तौर पर एकत्रित करने की रणनीति और कार्य पद्धति तैयार करने के बारे में श्रीमती रजनी के साथ हमारी कई दौर की चर्चाएं हुईं ताकि राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में स्थित तमाम प्रगतिशील विद्यालयों के छात्रों को एकत्रित किया जा सके और मिशन के उद्देश्यों को पूरा करने की दृष्टि से उन्हें प्रशिक्षित किया जा सके जिससे कि वे अपने पार्श्ववर्ती इलाकों में रह रहे वयस्क,

असाक्षर व्यक्तियों को 'इच वन टीच वन' के आधार पर साक्षरता का पाठ पढ़ा सकें। लगातार 24 वर्षों तक चलते हुए इस कार्यक्रम ने एक गतिशील और सार्थक स्वरूप को प्राप्त किया। 15 विद्यालयों से शुरू होकर आज दिल्ली स्कूल लिटरेसी प्रोजेक्ट के तहत कुल 100 विद्यालयों के 7000 विद्यार्थी स्वयंसेवी आधार पर साक्षरता को बढ़ाने में सक्रिय सहयोग प्रदान कर रहे हैं। अब तक का यह एक अत्यन्त ही प्रभावी और न्यूनतम खर्च पर संचालित किया जाने वाला कार्यात्मक साक्षरता कार्यक्रम है जो गैर–सरकारी संस्थाओं द्वारा प्रदत्त सामान्य अनुदान एवं विद्यालयों के सहयोग से चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम के तहत प्रतिवर्ष 6000 से भी अधिक असाक्षर व्यक्तियों को साक्षरता प्रदान की जाती है।

श्री बोर्डिया सम्पूर्ण साक्षरता अभियानों के स्थानीय स्वरूप को बर्करार रखना चाहते थे। वह चाहते थे कि यह अभियान क्षेत्र, समय और परिणाम आधारित होते हुए भी न्यूनतम खर्च पर संचालित हो। इसी दिशा में आगे बढ़ते हुए उनकी इच्छा थी कि साक्षरता अभियानों को बनाये रखने के लिए आवश्यक संसाधन विभिन्न स्रोतों से प्राप्त किया जाय ताकि लक्ष्य प्राप्ति में कोई बाधा उत्पन्न न हो। लेकिन वे संसाधन के निजी सूत्रों पर विश्वास करते थे। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि मौलिक विचार, स्पष्टता, उद्देश्य के प्रति संजीदगी तथा अपनी निजी प्रतिबद्धता के कारण तमाम अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर उनकी उपस्थिति सहज ही दर्ज होती थी। पर विश्व बैंक, यूनेस्को, यूनिसेफ, यूएनडीपी, यूनिफेम, यूएनएफपीए तथा आइएलओ जैसे विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के साथ उत्कृष्ट संबंध होते हुए भी श्री बोर्डिया यह नहीं चाहते थे कि साक्षरता अभियानों के लिए बाहरी अनुदान प्राप्त किया जाय।

'महिला सामख्या' श्री बोर्डिया का एक दूसरा मौलिक और विशद योगदान था। महिला सामख्या एक संरचनाबद्ध योजना थी जिसका उद्देश्य जीवन के हर क्षेत्र में महिला समानता एवं सशक्तीकरण के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए महिला नेतृत्व विकसित करना था फिर चाहे क्यों न वह घर हो, विद्यालय हो, हास्पिटल हो, कार्यक्षेत्र हो या फिर समाज जीवन। राजस्थान में महिला विकास योजनाओं के 'साथी' के मॉडल के आधार पर अनेक जमीनी कार्यकर्ताओं के माध्यम से उन्होंने महिलाओं के उपयुक्त एवं उनके हित साधन करने योग्य सूचनाओं को उन तक पंहुचाया जिससे कि व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्वायत्तता के लिए महिलाएं स्वयं निर्णय लेने में सक्षम हो सकें। इस कार्य में उन्हें प्रख्यात शिक्षाविद् श्रीमती विमला रामचन्द्रन का अनन्य सहयोग प्राप्त हुआ जो दिल्ली विश्वविद्यालय से इस कार्य हेतु प्रतिनियुक्ति (डेपुटेशन) पर गयी थीं।

प्रौढ़ शिक्षा में शोध कार्य की महत्ता को बहुत पहले से ही स्वीकार किया जाता रहा है पर दिसम्बर 2009 में पारित बेलम घोषणापत्र में इस कार्य की महत्ता पुनः रेखांकित हुईं। दुर्भाग्यवश भारत में प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में शोध कार्य पर न्यून्तम निवेश किया जाता रहा है। श्री बोर्डिया प्रौढ़ शिक्षा में शोध कार्य को आगे बढ़ाना चाहते थे इसलिए वे चाहते थे कि नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडल्ट एजूकेशन (एनआइएइ) की स्थापना हो। आगे चलकर इसके लिए स्थान भी निर्धारित किया गया और इंस्टीट्यूट के प्रथम निदेशक के रूप में डॉ. अनिता दीघे की नियुक्ति कर अत्यंत उत्साह के साथ कई शोध कार्य भी प्रारंभ किये गये। मैं 90 के उस दशक को बार–बार याद करता हूं जब मैं और मेरे सहकर्मी श्रीमती अनिता कौल, श्री पी. के. त्रिपाठी

तथा श्री आर. के. सैनी ने श्री बोर्डिया की देखरेख में अत्यंत ही उच्च व्यावसायिक क्षमता सम्पन्न व्यक्तियों के माध्यम से शोध कार्य संचालन हेतु तथा एनआइएइ में इसके लिए आवश्यक आधारभूत ढ़ांचा खड़ा करने के लिए दिनरात कार्य किया करते थे। दुर्भाग्यवश इस प्रस्ताव को डिपार्टमेंट ऑफ एक्सपेंडिचर, वित्त मंत्रालय की स्वीकृति प्राप्त नहीं हो सकी और कैबिनेट के लिए प्रस्तुत नोट आईएफडी की स्वीकृति के अभाव में निर्णायक स्वरूप तक नहीं पंहुचाया जा सका। इस प्रकार एनआइएइ जिसकी अवधारणा स्वयं श्री बोर्डिया ने अत्यंत ही स्पष्टता और प्रतिबद्धता के साथ की थी उसका पटाक्षेप हो गया।

इस प्रस्ताव को जिन कारणों से आइएफडी की स्वीकृति प्राप्त नहीं हो सकी उनमें दो प्रमुख कारण थे – सेवा प्रदान करने वाले संस्थान के रूप में प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय का अस्तित्व में होना तथा एनआइएइ जैसे संस्थान की स्थापना वस्तुतः प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय के समानान्तर एक अलग संस्था की स्थापना होगी जो पूर्व कार्य को दुहराने सी बात होगी, इसकी आशंका। श्री बोर्डिया और मैंने आइएफडी की स्वीकृति प्राप्ति हेतु कई कारण गिनाये – (क) प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय अपने मौजूदा स्वरूप में शोध कार्य के साथ न्याय नहीं कर सकता (ख) यह पहले राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम (एनएइपी) और बाद में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (एनएलएम) के लिए सेवा प्रदान का कार्य करता रहा है (ग) यह साक्षरता तथा उत्तर साक्षरता एवं सतत शिक्षा हेतु पठन–पाठन सामग्री एवं प्रौढ़ शिक्षा कर्मियों के प्रशिक्षण हेतु राज्य संसाधन केन्द्रों के समन्वय का कार्य करता है और (घ) इसे शोध कार्य संचालन करने का जनादेश भी प्राप्त नहीं है। हमारे इन प्रतिबद्धतापूर्ण सघन प्रयासों के बावजूद एनआइएइ की जन्म लेने से पहले ही अकाल मृत्यु हो गयी।

बावजूद इसके श्री बोर्डिया पहले जैसे ही अडिग रहे। मैं आज भी बड़े गर्व के साथ वो क्षण याद करता हूं (मैं तब श्री बोर्डिया के साथ ही था) जब अप्रैल 1992 में एनआइएइ को आइएफडी की स्वीकृति प्रदान करने के बारे में सचिव, एक्सपेंडिचर का अत्यंत ही सख्त, हठपूर्ण और जिद्दी रवैये को देख श्री बोर्डिया उन्नत सिर करते हुए सचिव के कमरे से बाहर निकले थे।

इस प्रकार के व्यक्ति थे श्री बोर्डिया और ऐसा ही था उनका मिजाज। पूर्णतया स्वाधीन, स्वतंत्र, मौलिक और किसी भी बाहरी दबाव में न झुकने वाला। प्रचलित अवधारणाओं से परे श्री बोर्डिया सहभाग और विमर्श में विश्वास रखते थे। चाहे वो संगोष्ठी हो या कार्यशाला या नियमित बैठकें, वे सभी के विचारों और दृष्टिकोणों को उनके स्वाभाविक स्वरूप में प्रवाहित होने देते थे। बावजूद इसके की उनकी स्वयं की एक प्रच्छन्न सोच होती थी जो सभी प्रकार के विचारों को सुनने के उपरांत प्रौढ़ शिक्षा जैसे कार्यक्रम जिनके हेतु बनाई गयी है उनके पक्ष में हीं रहे इस हेतु स्पष्ट, तर्कपूर्ण और व्यावहारिक निर्णय लेते थे।

निर्णय लेने की सम्पूर्ण प्रक्रिया के दौरान श्री बोर्डिया के मन में जनजातियों, दलितों, महिलाओं तथा अन्य वंचित समुदायों के प्रति सदा ही सहानुभूति होती थी। मुझे श्री चिमनभाई मेहता के साथ हुई एक बातचीत का उदाहरण याद आता है जिनके पास अप्रैल–दिसम्बर, 1990 के दौरान (जब स्व. श्री वी. पी. सिंह प्रधानमंत्री थे) मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री का स्वतंत्र प्रभार था। मंत्रालय के सभी संयुक्त सचिवों का नये मंत्री के साथ परिचय हो गया था। जब मेरी बारी आई तो मंत्री महोदय ने मेरी पृष्ठभूमि और पूर्व पद के बारे में जानना चाहा। यह जानकर की मैं श्रम विभाग (मैं 1982–1985 के दौरान महानिदेशक, लेबर

वेलफेयर/संयुक्त सचिव था) से आता हूं मंत्री महोदय ने पूछा कि श्रम और प्रौढ़ शिक्षा दोनों साथ–साथ किस प्रकार चल पाते हैं। श्री बोर्डिया ने अपने चिर परिचित मौलिक अंदाज में तत्काल ही उत्तर दिया कि 'श्री मिश्रा ने अत्यंत ही संजीदगी, प्रतिबद्धता और सहानुभूतिपूर्ण तरीके से वर्षों तक गरीब, वंचित एवं असहाय लोगों की सेवा की है, भारत में प्रौढ़ शिक्षा जिसके तहत लाखों असाक्षर लोगों को साक्षरता प्रदान करने का कार्य संपादित किया जाता है और जिनमें से अधिकांश गरीब और वंचित हैं तथा समाज के सबसे निचले तबके से आते हैं उनकी सेवा करने तथा प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के तहत दायित्व निर्वहन करने वाले अधिकारी से भी वहीं गुण अपेक्षित हैं' जिसे मंत्री महोदय ने स्वीकृति और सहमति प्रदान की।

ऐसे थे मेरे श्रद्धेय मार्गदर्शक, मेरे आदर्श और उस समय के महान व्यक्तित्व श्री अनिल बोर्डिया। मेरे वे पांच वर्ष जो श्री बोर्डिया के साथ बीते, उस दौरान प्राप्त उनका सौम्य नेतृत्व व विशाल हृदय मेरे तकरीबन 50 वर्षों के प्रशासनिक सेवा कार्यकाल (राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय दोनों मिलाकर) के सबसे अविस्वमरणीय दिन थे। चाहे सचिव, शिक्षा, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार का पद हो या चेयरमैन, लोक जुम्बिश परिषद या चेयरमैन, नेशनल एजूकेशनल फाउण्डेशन जिसके माध्यम से किशोरों एवं युवाओं हेतु शिक्षा तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किया गया जिसे 'दूसरा दशक' भी कहते हैं, के दौरान उनका एक ही लक्ष्य था और एक ही दृष्टि थी और वह था पंहुच से परे समुदाय तक पंहुचना, जो कार्य शुरू न किया गया हो उसे शुरू करना और किसी भी प्रकार से उन लाखों मौन चेहरों पर उल्लास की एक लकीर पैदा करना जिनके पास उल्लास का कोई कारण नहीं होता। जाने कितने हीं दुखित हृदयों को उन्होंने शान्ति और सहारा प्रदान किया और कितने हीं कलान्त हृदयों को सुख, शान्ति और चैन प्रदान की। उस महान व्यक्तित्व और श्रेष्ठ आत्मा के बारे में अपनी वास्तविक अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए शब्द संसार किंचित छोटा साबित होता है। गुरूदेव रविन्द्रनाथ टैगोर की कविता 'एबार फेराओ मोरे' की कई अमर पंक्तियां जिसे हर प्रौढ़ शिक्षार्थी को कार्यक्रम के समापन पर गाना चाहिए मैं उनके साथ अक्सर गुनगुनाया करता था। श्री बोर्डिया की स्मृति में मैं उन्हीं पंक्तियों को दोहराता हूं। मूलतः बांग्ला भाषा में रचित उन पंक्तियों का हिन्दी अुनवाद निम्न स्वरूप हैः

उत्तुंग लहरों पर उन्मत्त बहते हुए
अंजान – अपरिचित महासागर के
हमें बढ़ते रहना है सदैव आगे की ओर
मान सच को पथ प्रदर्शक
मृत्युभय को दरकिनार करते हुए।

(अंग्रेजी में प्रकाशित लेख का बी. संजय द्वारा हिंदी अनुवाद)

ग्रामीण नेतृत्व क्षमता विकास– प्रभावी उपागम एवं उपाय (उत्तराखण्ड के परिप्रेक्ष्य में)

– एस एस रावत

भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत लोक सत्ता पर आधारित पंचायती राज व्यवस्था सबसे उपयुक्त और न्यायोचित प्रणाली है। पंचायती राज संस्थाएं लोकतांत्रिक अभिशासन के महत्वपूर्ण संस्थान हैं। पंचायतों के माध्यम से निचले स्तर से उच्च स्तर की ओर केन्द्रित सहभागी नियोजन को प्रोत्साहन मिलता है तथा निर्बल एवं वंचित वर्गों की सक्रिय सहभागिता में वृद्धि होती है। 73वें संविधान संशोधन के द्वारा एक ओर पचायतों को एक संवैधानिक संस्था का स्तर दिया गया वहीं दूसरी ओर पंचायतों के स्वरूप, संरचना, भूमिका और कार्यों में राष्ट्रव्यापी एकरूपता स्थापित करने का महत्वपूर्ण प्रयास किया गया। नई त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम पंचायत ग्रामीण अभिशासन की आधारभूत इकाई है। ग्राम पंचायत स्वयं में स्वायत, स्वशासी व सम्पूर्ण है। नये संविधान संशोधन द्वारा पंचायतों को संवैधानिक स्तर प्रदान कर न केवल ग्राम स्तर पर प्रत्यक्ष प्रजातंत्र स्थापित करने की दिशा में महत्वपूर्ण पहल की गई है, वरन् सतत विकास को सम्भव बनाने के लिये स्थानीय नियोजन प्रक्रिया को भी प्रतिष्ठित किया गया है। इस प्रकार मौलिक विकास को नागरिकों के समीप ले जाने का प्रयास किया गया है।

देश के अन्य राज्यों के समान भारतीय गणतंत्र के 27वें नवगठित राज्य उत्तरांचल में भी नई पंचायती राज प्रणाली के अन्तर्गत पंचायती राज संस्थान कार्यरत हैं। 53483 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल पर फैले 1,01,16752 (2011 की जनगणना के अनुसार) जनसंख्या वाले इस राज्य की लगभग 75.33 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण है। राज्य का 92.57 प्रतिशत भू–भाग पर्वतीय तथा 7.43 प्रतिशत भाग मैदानी है। राज्य का मात्र 12 प्रतिशत भू–भाग ही कृषि योग्य है। राज्य के कुमांयु और गढ़वाल दो मण्डलों के अन्तर्गत कुल 13 जनपद हैं। इन जनपदों के अन्तर्गत 13 जिला पंचायतें, 95 विकासखण्ड, 7219 ग्राम पंचायतें तथा 16583 ग्राम हैं। नई व्यवस्था के अन्तर्गत ग्राम स्वतः एक इकाई बन गई है व पंचायत ने एक कार्यकारी व प्रशासनिक संस्था की भूमिका धारण कर ली है। इस प्रकार पंचायत ग्राम की सरकार बन गई है जिसमें पंचायत नेतृत्व की स्थिति सर्वोच्च शासकीय एवं प्रशासकीय अधिकारी समतुल्य हो गई है। 73वें संविधान संशोधन के पश्चात पंचायतीराज की संस्थाओं में ग्रामीण समाज से ऐसे अनेक लोगों के चुन कर आने की सम्भावना बनी है जो कई कारणों से अब तक इस प्रजातांत्रिक व्यवस्था के अंग बनने से उपेक्षित और वंचित रहे हैं।

भौगोलिक कारणों से उत्तरांचल में समुचित विकास विकेन्द्रीकरण के माध्यम से ही सम्भव है। पर्वतीय परिप्रेक्ष्य में नये पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत इस परिवर्तन का एक विशेष महत्व है क्योंकि पर्वतीय क्षेत्रों में स्थानीय विकास में आवश्यकताओं की दृष्टि से अनेक विविधता पाई जाती है। ऐसे में नई पंचायत व्यवस्था की सफलता व उपयोगिता पंचायत नेतृत्व की गुणात्मक क्षमताओं पर निर्भर करती है।

ग्राम स्तर पर पंचायत नेतृत्व अभिशासन व विकास का केन्द्रीय अभिकरण है। अतः ग्रामों में विकास की स्थिति और भावी दिशा प्रमुख रूप इस बात पर निर्भर करती है कि हमारे ग्रामीण नेता कौन और कैसे हैं, उनका चुनाव उपयुक्त प्रक्रिया से हुआ है अथवा नहीं! वे वास्तविक लोकमत का प्रतिनिधित्व करते हैं अथवा नहीं! वे वर्तमान में नेतृत्व की भूमिका निर्वहन में कितने प्रभावी और सक्षम हैं! तथा भविष्य में अपनी नेतृत्व क्षमता विकास के लिये कितने सक्रिय और सचेत हैं! निचले स्तर पर सुयोग्य, सक्षम और प्रभावी नेतृत्व से ही सुअभिशासन को सम्भव बनाया जा सकता है। नई व्यवस्था के अन्तर्गत राज्य के जनतांत्रिकरण का मार्ग तो प्रशस्त किया गया है किन्तु निचले स्तरों पर सामाजिक, आर्थिक परिक्षेत्र में जनतांत्रिकरण का व्यावहारिक स्वरूप दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। इस व्यवस्था में संरचनात्मक तथा प्रक्रियात्मक स्वरूप के परिवर्तन से अभिशासन की इन मूलभूत संस्थाओं के स्वरूप और अधिकारों में निश्चित रूप से परिवर्तन हुआ है, किन्तु सामूहिक सशक्तीकरण द्वारा ग्रामीण समुदाय को विकास की मुख्य धारा में सम्मिलित करने की प्रक्रिया में वांछित सफलता नहीं प्राप्त हो रही है। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अधिकांश क्षेत्रों में नेतृत्व निर्धारण में अभी भी अवांछनीय तत्वों का वर्चस्व बना हुआ है। नये प्रावधानों के अन्तर्गत दलित और महिला वर्ग की सत्ता में भागीदारी के अवसरों में वृद्धि होने के बावजूद शक्तिशाली और प्रबल वर्ग, नेतृत्व और निर्णय प्रक्रिया में प्रभावी है। इसीलिये ग्रामीण समुदाय को प्रदत्त अधिकारों और उनके द्वारा अधिकारों के प्रयोग में अभी भी एक बड़ा अन्तराल बना हुआ है। ग्राम स्तर पर जनकेन्द्रित अभिशासन के अभाव का प्रमुख कारण सर्वमान्य और सक्षम ग्रामीण नेतृत्व का अभाव है।

नवसर्जित उत्तरांचल राज्य अभी अपनी विकास यात्रा के प्रारम्भिक चरण में है। राज्य के सम्मुख विकास के अनेक मूलभूत प्रश्न और समस्याएं हैं। विषम भौगोलिक दशाओं, सीमित संसाधनों और समयबद्धता के साथ राज्य के सभी वर्गों को विकास की मुख्य धारा में जोड़ने की चुनौती है। यह कार्य राज्य की तीन चौथाई ग्रामीण जनसंख्या को स्थानीय स्तर पर सर्वोच्च प्राथमिकता के साथ सुअभिशासन सुनिश्चित करके ही सम्भव हो सकता है। वर्तमान में एक ओर आवश्यकता मूलक और क्षेत्राधारित नीतियों का अभाव है, वहीं दूसरी ओर नीतियों के क्रियान्वयन में पारदर्शिता, निरपेक्षता और जवाबदेही का अभाव हैं। आज भी पर्वतीयजन जल, वन और भूमि सम्बन्धी आधारभूत अधिकारों से वंचित हैं।

अभिशासन को प्रभावी और लोकाधारित बनाने में ग्रामीण नेतृत्व की भूमिका निम्न रूप में केन्द्रीय और महत्वपूर्ण होती हैः

- विभिन्न स्तरों पर समान रूप से त्वरित और निष्पक्ष निर्णय लेने में सहायता मिलती है।
- निर्णयों का सार्वजनिक हित में न्यायोचित और पारदर्शी क्रियान्वयन सम्भव होता है।
- विकास कार्यों के नियोजन और क्रियान्वयन के सम्बन्ध में जवाबदेही सुनिश्चित होती है।
- अभिशासन में जन भागीदारी से विधिक शासन को स्थापित करते हुए सामाजिक न्याय प्रदान करने में सहयोग मिलता है।

गांवों के विकास में पंचायत नेतृत्व सर्वाधिक सक्षम परिवर्तन अभिकर्ता के रूप में अपनी भूमिका का

निर्वहन कर सकता है। कुशल नेतृत्व में प्रखर व्यक्तित्व, प्रभुत्व, श्रेष्ठता, शक्ति, जनअभिप्रेरणा विकसित करने के गुण, प्रभावोत्पादकता, निर्णय क्षमता और दायित्वबोध होता है। नेतृत्व सम्बन्धी अवधारणा के अनुसार वे व्यक्ति जो श्रेष्ठ व्यक्तित्व, सत्ता, प्रतिष्ठा और सार्वजनिक हित में किये गये कृत्यों के द्वारा समाज को उच्चतर लक्ष्यों की ओर उन्मुख करने की प्रेरणा देते हैं और उन्हें निरन्तर प्रभावित और नियंत्रित करते हैं, नेतृत्व की स्थिति प्राप्त करते हैं। कुशल नेतृत्व नागरिकों को इस प्रकार से सहयोग और दिशा प्रदान करता है जिससे वे वर्तमान और भावी समस्याओं के समाधान हेतु सक्षम और आत्मनिर्भर बन सकें। किन्तु उत्तरांचल के अधिकांश पर्वतीय ग्रामीण भागों से लोगों के स्थायी और अस्थायी पलायन के कारण पंचायत नेतृत्व के लिये सक्षम मानव शक्ति की कमी है। आरक्षण की नई व्यवस्था के अन्तर्गत महिलाओं और दलितों को वंचित और शोषित समूहों के रूप में संवैधानिक तौर पर लोकतान्त्रिक प्रक्रिया का नेतृत्व प्रदान करने का प्रयास किया गया है। इसके पीछे यह उद्देश्य था कि शक्ति सन्तुलन और साझी निर्णय प्रक्रियाओं के माध्यम से सामाजिक बदलाव आयेगा और राजनीति का लोकतान्त्रिकरण होगा, किन्तु इन वर्गों से ऐसे सक्षम नेतृत्व उभरकर सामने नहीं आ पा रहे हैं जो पंचायत के अभिशासन, नीतिनिर्माण और योजना निर्माण आदि से सम्बन्धित निर्णय प्रक्रिया में प्रभावकारी भूमिका निभा सकें। अधिकांश पर्वतीय क्षेत्रों के पंचायत नेतृत्व में प्रतिनिधित्व की समानता के साथ–साथ सहभागिता और प्रभाव की समानता नहीं है जिसके कारण अभिशासन के स्तर पर अनेक विसंगतियाँ उत्पन्न हुई हैं और विकास कार्यक्रमों को प्रभावी रूप में संचालित करने और समुदाय के अनुभाविक विश्वासों, अभिव्यक्तात्मक प्रतीकों और मूल्यों को सही दिशा देने में कठिनाई उत्पन्न होती है।

अतः नवसृर्जित राज्य में ग्रामीण नागरिकों के सतत विकास के लिये निचले स्तर पर सुअभिशासन आवश्यक है। सु–अभिशासन के लिये कुशल पंचायत नेतृत्व की सर्वोच्च प्राथमिकता है। इसके लिये दो स्तरों पर सुदृढ़ और व्यावहारिक कार्य योजना के अन्तर्गत निम्न प्रयासों की आवश्यकता हैः

1. वयस्क ग्रामीणों में मतदाता जागरूकता कार्यक्रम के द्वारा उत्तरदायी मत–व्यवहार उत्पन्न करना।
2. निर्वाचित पंचायत प्रतिनिधियों में नेतृत्व दक्षता बढ़ाने के लिये सघन व प्रभावी क्षमता विकास प्रशिक्षण का आयोजन करना।
3. मतदाता जागरूकता कार्यक्रम।

नेतृत्व चयन हेतु ग्रामीण नागरिकों का मतव्यवहार पूर्वाग्रहों व निहित स्वार्थों से मुक्त हो तथा उनका मत बुद्धिसंगत, स्वतंत्र, निष्पक्ष एवं व्यापक लोकहितों पर आधारित हो इसके लिये निम्न प्रयास किये जाने चाहियेः

- राजनैतिक जागरूकता व नागरिक शिक्षा के प्रसार हेतु सरकारी, गैर–सरकारी संस्थाओं तथा जन संचार माध्यमों का उपयोग।
- ग्रामीण सूचना, मन्त्रणा एवं परामर्श–केन्द्र की व्यवस्था।
- ग्रामीणों में मतव्यवहार सम्बन्धी विवेकपूर्ण संचेतना के विकास हेतु पारिवारिक स्तर पर सम्पर्क और परामर्शदाता समूहों दलों को सक्रिय भूमिका सौंपना।

- स्वगठित लोक संगठनों, गुटों, महिला व वंचित समूहों के लोगों में मूल्याधारित राजनीतिक संस्कृति व चेतना विकसित करने हेतु गतिविधियाँ आयोजित करना।
- सरल व बोधगम्य भाषा में राजनीतिक जागरूकता सम्बन्धी सामग्री का निर्माण, प्रकाशन व वितरण।
- ग्रामीण अभिजनों के लिये विशेष शिविरों का आयोजन करना।
- विभिन्न क्षेत्रों के ग्रामीण नेतृत्व से जुड़े सफल अनुकरणीय उदाहरणों को व्यापक रूप से प्रचारित व प्रसारित करना।
- मतदाता जागरूकता कार्यक्रम को सामान्य प्रक्रिया के अन्तर्गत ग्राम स्तर पर निरन्तर संचालित करना पर निर्वाचन अवधि के दौरान विशिष्ट व सघन कार्यक्रमों का आयोजन करना।
- पर्वतीय ग्रामीण क्षेत्रों में नेतृत्व निर्धारण से जुड़े विभिन्न पहलुओं जैसे मतदाता व्यवहार, जनमत और निर्वाचन प्रक्रिया आदि को प्रभावित करने वाले कारकों के सम्बन्ध में सहभागी अनुसंधान, मूल्यांकन और प्रलेखन को प्रोत्साहित करना।

पंचायती राज नेतृत्व के माध्यम से सु–अभिशासन के लिये सुसंगत स्थितियाँ उत्पन्न करने हेतु प्रथम चरण में मतदाता जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से सुयोग्य प्रतिनिधियों को निर्वाचित किया जा सकता है। किन्तु अभिशासन से सम्बन्धित विभिन्न नीतियों एवं क्रियाकलापों को सुचारू रूप में संचालित करने के लिये निर्वाचित पंचायत प्रतिनिधियों में विशिष्ट दृष्टि व क्षमता का विकास करना भी आवश्यक होता है। यद्यपि वर्तमान पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न अभिकरणों द्वारा विभिन्न स्तरों पर पंचायत प्रतिनिधियों के लिये प्रशिक्षणों की व्यवस्था की गई है। किन्तु अपर्याप्त विशेषज्ञों, संसाधनों, प्रशिक्षण तकनीकियों तथा प्रशासनिक व्यस्तताओं एवं प्रतिभागियों की निष्क्रियता के कारण ये प्रशिक्षण अपेक्षित उद्देश्यों की पूर्ति में सफल नहीं हो पा रहे हैं। इन प्रशिक्षणों के नियोजन, प्रबन्धन, संचालन और मूल्यांकन की ओर समुचित ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यद्यपि कुछ स्वैच्छिक संगठनों द्वारा क्षमता विकास प्रशिक्षणों के अच्छे परिणाम अवश्य सामने आये हैं किन्तु ऐसे प्रयासों को व्यापकता प्रदान करने की आवश्यकता है। यहाँ इस बात को समझना आवश्यक है कि निर्वाचित पंचायत प्रतिनिधि निचले स्तर पर विकेन्द्रीकृत व्यवस्था में अभिशासन के प्रहरी और संवाहक दोनों हैं, अतः इन प्रतिनिधियों में नेतृत्व सम्बन्धी विशिष्ट दक्षता का विकास आवश्यक है।

नेतृत्व क्षमता विकास प्रशिक्षण के अन्तर्गत निर्वाचित पंचायत प्रतिनिधियों में बहुआयामी व्यक्तित्व के विकास हेतु अधोलिखित तीन स्तरों पर गुणात्मक परिवर्तन लाने हेतु ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहियेः

1. आवश्यक सूचनाओं द्वारा उनमें ज्ञानात्मक संवृद्धि करना।
2. अभिप्रेरणा द्वारा सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित करना।
3. क्रियात्मकता उत्पन्न कर उन्हें सक्रिय बनाना तथा आचरण में रचनात्मक परिवर्तन करना।

इस प्रकार उपरोक्त स्तरों में गुणात्मक परिवर्तन लाने के लिये सरकारी व स्वयंम् सेवी संस्थाओं एवं विश्वविद्यालय से अनुभवी नीतिकारों, प्रशासकों, विशेषज्ञों, क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं तथा संचार कर्मियों को सम्मिलित कर निम्न पहलुओं पर प्रभावी नेतृत्व क्षमता विकास प्रशिक्षण की योजना तैयार कर सभी क्षेत्रों में इसका

आयोजन किया जाना चाहियेः

1. नीतिगत प्राथमिकतायें

- पंचायती राज से सम्बन्धित संकल्पनाओं, संरचनाओं, अधिनियम, कानूनों और प्रक्रिया की जानकारी।
- विकास योजनाओं की जानकारी।
- क्षेत्र विशेष आधारित और आवश्यकतामूलक नियोजन हेतु प्राथमिकतायें ज्ञात करना।

2. सूक्ष्म स्तरीय नियोजन

- नियोजन की आवश्यकता, उद्देश्य और प्रकृति की जानकारी।
- सुसंगत और व्यावहारिक नियोजन प्रक्रिया का ज्ञान।

3. संसाधनों का प्रबन्धन, उपयोग और सम्बर्द्धन

- परम्परागत और नये संसाधनों की पहचान।
- पारिस्थितिकीय सन्तुलन और सतत विकास को दृष्टिगत रखते हुए मानवीय और भौतिक संसाधनों का प्रबन्धन, उपयोग और सम्बर्द्धन।
- परिसम्पतियों का रखरखाव, अनुरक्षण और सदुपयोग।
- लागत, अवधि और उपलब्धियों के परिप्रेक्ष्य में संसाधनों की स्थिति के मूल्यांकन की क्षमता।

4. विकास प्रक्रिया में संस्थाओं और समुदाय की सहभागिता

- विकास कार्यक्रमों के नियोजन और क्रियावन्यन में जन सहभागिता बढ़ाने हेतु अभिप्रेरण, वातावरण सृजन व अन्य युक्तियों का ज्ञान।
- सामाजिक–सक्रियता हेतु संचार तकनीकि की जानकारी।
- स्वैच्छिक प्रयासों को प्रोत्साहित करने की समझ।
- त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं के मध्य सहयोग और समन्वय।
- सभी वर्गों की समान भागीदारी के प्रयासों का ज्ञान।
- सरकारी और गैर सरकारी स्तरों पर सामंजस्य के प्रयास।

5. ग्रामीण अर्थतन्त्र और पारिस्थितिक–तन्त्र का समन्वय

- ग्रामीण निर्धनता के प्रमुख कारकों की समझ।
- आर्थिक क्षेत्र में गुणात्मक संवृद्धि के तात्कालिक और दीर्घकालिक उपायों की जानकारी।
- दीर्घकालिक और सतत आर्थिक विकास हेतु व्यक्तिगत और सामुहिक प्रयासों को प्रोत्साहन।
- आर्थिक संसाधनों के समुचित उपयोग, विकास तथा पारिस्थितिक संतुलन के सम्बन्ध में विवेकपूर्ण सोच का विकास।
- उद्यमिता विकास व स्वरोजगार की सम्भावनाओं का ज्ञान।
- जन सामान्य के लिये विज्ञान और उपयुक्त तकनीकि के उपयोग की समझ।

6. समुदाय के सभी वर्गों के मध्य सामंजस्य और शक्ति सन्तुलन

- सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक आधार पर बने संगठनों, संस्थाओं व गुटों के लोगों में सांमजस्य के प्रयासों का ज्ञान।
- निर्बल व वंचित वर्गों के सुदृढीकरण पर विशेष ध्यान।
- सभी वर्गों में विकास के प्रति सामुहिक उत्तरदायित्व के बोध का विकास ।
- व्यापक हितों के लिये व्यक्तिगत व वर्गगत हितों के परित्याग के भाव के विकास की जानकारी।

7. निर्णय क्षमता और निर्णय प्रक्रिया

- नियोजन, क्रियान्वयन व मूल्यांकन के सभी स्तरों पर लिये जाने वाले निर्णयों का ज्ञान।
- सार्वजनिक हित में त्वरित और सही निर्णय निर्धारण प्रक्रिया की जानकारी।
- सामान्य और संवेदनशील विषयों पर निर्णय क्षमता का ज्ञान।
- निर्णयों के परिप्रेक्ष्य में नेताओं के अधिकारों, कर्तत्यों व सीमाओं का ज्ञान।
- निर्णय निर्धारण प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों की जानकारी।
- निर्णय प्रक्रिया में सामुहिक सहभागिता।
- आकस्मिक निर्णय लेने की क्षमता का ज्ञान।

8. दीर्घकालिक दृष्टि और सतत् विकास

- उपलब्धियों और कमियों के सम्बन्ध में प्रभावी सूचना–तन्त्र (अनुश्रवण) व मूल्यांकन की समझ।
- सामुहिक सशक्तीकरण और चिरन्तर–विकास के लिये स्थायी और दीर्घकालिक प्रयासों की जानकारी।
- आत्मनिर्भर और स्वावलम्बी ग्रामीण समाज के निर्माण के लिये प्राथमिकतायें और प्रयासों की समझ।
- शोध एवं विकास को प्रोत्साहित करने हेतु सतत् प्रयास।

संदर्भ

1. 'चिरन्तन विकास के लिये समुदाय का सशक्तीकरण' (2001), हिमालय एक्शन रिसर्च सेंटर (हार्क) प्रकाशन, देहरादून।
2. 'उत्तराखण्ड में ग्राम प्रधान' (1999), वर्तमान पंचायती राज, पंचायती राज गुणवत्ता अभिवर्धन कार्यक्रम (उत्तराखण्ड क्षेत्र) रिपोर्ट, भुवनेश्वरी महिला आश्रम अंजनीसैंण, टिहरी।
3. प्रेमचड्ढ़ा (2003), उत्तरदायित्वपूर्ण अभिशासन, प्रिया (वार्षिक रिपोर्ट), प्रिया प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. मन्दाकिनी पन्त (2003), सहभागी अनुसंधान एवं लोकतान्त्रिक अभिशासन, प्रिया प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. नरेन्द्र सिंह बिष्ट (2005), उत्तरांचल एक विस्तृत अवलोकन पुस्तक, अरिहन्त पब्लिकेशन प्रा.लि., मेरठ।

कन्या भ्रूण हत्या – मानव जाति पर प्रहार (राजस्थान राज्य के विशेष संदर्भ में)

पुष्पेन्द्र सोलंकी

"मेरे लिए बेटा यदि बुढापे की लाठी है तो
बेटी मेरे जीवन–ज्योति पुंज की बाती है।
बेटा यदि दृष्टि है तो बेटी सम्पूर्ण सृष्टि है।
बेटा आंखों का तारा है तो बेटी आसमान सारा है।"

– वृषकेतु श्रीवास्तव (दैनिक भास्कर, 07.08.2012)

पितृसत्तात्मक होने के कारण भारतीय समाज में महिलाओं की तुलना में पुरूषों को अधिक महत्व दिया जाता रहा है। समाज में आज भी यह धारणा व्याप्त है कि पुत्र कुल का दीपक होता है। इसके चलते पुत्री की स्थिति गौण हो जाती है। विवाह पर होने वाले व्यय की चिंता, सामाजिक असुरक्षा की भावना जैसे कई कारणों से लड़कियों को जन्म लेने से रोका जाता रहा है।

आर्थिक एवं सामाजिक रूप से समृद्ध और प्रतिष्ठित व्यक्ति को भी किसी लड़की का पिता होने में अपमान महसूस होता है। यह कैसी विडम्बना है कि "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" जैसी अवधारणा वाले देश में जन्मी–अजन्मी निर्दोष बालिकाओं के हो रहे कत्लेआम ने सभी को हृदयविहीन शिलाखण्ड के समान केवल मूकदर्शक बना दिया है। समाज में घटित हो रहे इस प्रकार के जघन्य कुकृत्य पर हमारा मस्तक लज्जावश झुक जाता है।

आज विश्व स्तर पर देखा जाये तो कन्या भ्रूण हत्या एक ज्वलंत एवं संवेदनशील चर्चा का विषय है। सदियों से सामाजिक मौन स्वीकृति के तले यह दुष्कृत्य सतत् रूप से गतिमान है। वर्तमान समय में वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के कारण जनसामान्य के लिए गर्भस्थ शिशु के लिंग की जाँच करना सुलभ हो गया है। परिणामस्वरूप कन्या भ्रूण हत्या और लिंग चयनित गर्भपात के द्वारा गर्भ में ही कन्या भ्रूण को मारने की दर में तीव्र वृद्धि हुई है।

21वीं शताब्दी के विकासशील भारत में कन्या भ्रूण हत्या से संबंधित आंकड़ों में हो रही निरन्तर वृद्धि सभ्य समाज के लिए एक गंभीर चुनौती के साथ–साथ मानव सभ्यता के लिए भी खतरा है। निर्दयी, निर्मम माता–पिता, संरक्षक, दम्पति, परिवार और समाज कन्या को जन्म के पूर्व या पश्चात् समाप्त करने पर आमादा है।

इस प्रकार मानव अपने द्वारा विकसित विज्ञान एवं तकनीकी के विकास को स्वयं के सर्वनाश में प्रयोग

कर रहा है जो कि आने वाले समय में आत्मघाती सिद्ध होगा।

सन् 1795 में ब्रिटिश शासनकाल में पारित किये गये बंगाल रेग्यूलेशन एक्ट – 21 के अन्तर्गत शिशु वध को हत्या की श्रेणी में माना गया था बावजूद इसके ब्रिटिश काल में यह कुप्रथा प्रचलन में रही। 19वीं शताब्दी में इस कुप्रथा को पूर्णतया समाप्त करने के लिए कठोर कदम उठाये गये लेकिन समाज में कन्या भ्रूण हत्या जैसी जटिल मानसिकता जीवित हीं रही।

महिलाओं के गर्भवती होने पर भ्रूण लिंग की पहचान करना, कन्या भ्रूण होने पर उसका पारम्परिक तरीकों के अलावा अत्याधुनिक तकनीकी साधनों के माध्यम से चिकित्सकीय समापन करना बहुत ही सरल कार्य हो गया है। समाज में कहीं चोरी–छुपे तो कहीं खुलेआम, दम्पति एवं चिकित्सक की आपसी रजामंदी से यह अमानवीय कार्य सम्पादित हो रहा है।

कन्या शिशु हत्या और कन्या भ्रूण हत्या के बीच एक मुख्य अन्तर यह है कि कन्या भ्रूण हत्या में चिकित्सक की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। गर्भवती महिला के शिशु का लिंग चयन तथा कन्या भ्रूण को गर्भ में ही समाप्त करने वाले क्लिनिक, नर्सिंग होम आज जगह–जगह कुकुरमुत्तों की भांति गली–गली, गांव–गांव, तहसील और शहरों में फैले हुए है।

लिंग निर्धारण के तकनीक का प्रयोग सन् 1970–1980 के दशक में प्रारम्भ हो गया था जिसका पंजाब व हरियाणा जैसे राज्यों में सबसे अधिक दुरूपयोग हुआ और यह नारा दिया गया कि "लड़का अथवा लड़की 500 रूपये खर्च करो और 5 लाख रूपये बचाओ"। आज केवल पंजाब में ही 1000 से अधिक संख्या में अल्ट्रासाउण्ड चिकित्सालय मौजूद हैं। राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में भी यह सुविधा बहुत ही आसानी से प्राप्त हो जाती है। यह कहा जाता है कि यहाँ पर जल आपूर्ति की अपेक्षा भ्रूण लिंग परीक्षण की सुविधा ज्यादा आसानी से प्राप्त हो जाती है।

आंकड़े बताते हैं कि भारत में सन् 1978 से 1982 के मध्य 78,000 कन्या भ्रूण हत्याएं हुई थी। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की एक रिपोर्ट के अनुसार सन् 1984 में अकेले मुम्बई शहर में 40,000 कन्या भ्रूण हत्या होने की पृष्टि हुई थी।

सेटर फॉर ग्लोबल हेल्थ रिसर्च द्वारा इस साल कराए गए सर्वेक्षण में यह तथ्य सामने आया है कि भारत में पिछले तीन दशक में 1 करोड़ 20 लाख बच्चियों को गर्भ में ही लिंग का पता लगा कर मार दिया गया।

इस रिर्पोट के अनुसार गैर कानूनी ढंग से हर साल 20 लाख गर्भपात कराए जा रहे हैं। 25 हजार प्रसव कराने वालों में से केवल 2 हजार ही रजिस्टर्ड होते हैं। प्रसूताओं की 20 फीसदी मौतें असुरक्षित गर्भपात की वजह से होती है। सेंटर फॉर सोशल रिसर्च की डायरेक्टर रंजना कुमारी कहती हैं – "गर्भपात के लिए 20 सप्ताह की अवधि को बढ़ाया गया तो इसकी आड़ में कन्या भ्रूण हत्या और अधिक होने लगेगी क्योंकि तीन महीने में लिंग परीक्षण थोड़ा मुश्किल ही रहता है लेकिन इसके बाद लिंग का पता चलते ही लोग गर्भपात के लिए भ्रूण की खराब सेहत का बहाना करने लगेंगे।

कई अन्य सरकारी संगठनों द्वारा किये गये आंकलन के अनुसार गर्भधारण करने की आयु में प्रत्येक

1000 महिलाओं में से 260 से 400 तक महिलाएं गर्भपात कराती हैं। सामान्यतया यह माना गया है कि 1 वैध गर्भपात के लिए 10 से 12 अवैध गर्भपात होते हैं। इस बारे में विश्व बैंक द्वारा वर्ष 1996 में एक रिपोर्ट प्रकाशित की गयी थी जिसके अनुसार भारत में प्रतिवर्ष 50000 अवैध गर्भपात होते हैं। इण्डियन मेडिकल ऐसोसिएशन ने भी इस रिपोर्ट को स्वीकार करते हुए कहा है कि वास्तविकता से परे सरकार मानती है कि प्रतिवर्ष केवल 107 कन्या भ्रूण हत्याएं होती हैं।

भारत में कन्या भ्रूण हत्या एक उद्योग का दर्जा प्राप्त कर चुका है क्योंकि एक अन्य अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि भारत में कन्या भ्रूण हत्या का कारोबार 450 करोड़ रूपये तक पहुँच गया है। इसी प्रकार भारत में प्रत्येक वर्ष 1 करोड़ 2 लाख गर्भपात किये जाते हैं इनमें से 67 लाख गर्भपात कन्या भ्रूण हत्या से संबंधित हैं।

भारत की मौजूदा जनगणना के अनुसार सन् 1961 से लेकर सन् 2011 के बीच 6 वर्ष तक की आयु वर्ग के शिशु लिंगानुपात में निरन्तर विषमता पैदा होती जा रही है। सन् 1961 में शिशु लिंगानुपात 976 था जो कि सन् 2001 में 927 तथा 2011 में 914 ही रह गया है।

दुर्गा पूजा के लिए विख्यात पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी स्वयं एक महिला हैं लेकिन उनके राज्य में एक महिला रूपाली बीबी को ससुराल वालों ने सिर्फ इसलिए जला कर मार दिया क्योंकि मृतक महिला ने लगातार दूसरी बार एक बेटी को जन्म दिया था। बाल हत्या का शिकार होती एक अन्य बालिका शिशु की हृदयविदारक कहानी इस प्रकार है –

"नवजात बालिका शिशु की हत्या करने में माहिर एक दाई छोटे से स्टूल का एक पाया नवजात बालिका शिशु की गर्दन पर रखकर निर्दयतापूर्वक यह कहते हुए बैठ जाती थी कि "जा बिट्टो जा अपने भैया को भेज"। नवजात बालिका शिशु की हत्या कर देने वाली ऐसी कुप्रथा सम्पूर्ण मानव जाति को शर्मसार करती है।"

कन्या भ्रूण हत्या को राष्ट्रीय शर्म की बात बताते हुए प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कहा है कि – "जीवन के हर क्षेत्र में महिलाओं द्वारा अपनी सार्थकता साबित करने के बावजूद देश में यह बुराई जारी है। देश मे बच्चों के लिए लिंग अनुपात की विकृति को ठीक करना महज इस बारे में उपलब्ध वर्तमान कानूनों को कड़ाई से लागू किये जाने तक ही सीमित नहीं है जरूरी यह है कि हम अपने समाज में कन्या शिशु को किस नजर से देखते हैं।

देश में कम होते लिंगानुपात से चिंतित केन्द्र और राज्य सरकारों ने कुछ कड़े फैसले लेने का निर्णय लिया है। कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए सरकार इसे एक महत्वपूर्ण एजेंडा बनाने जा रही है। इसे महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए बने राष्ट्रीय महिला अधिकारिता मिशन का महत्वपूर्ण मुद्दा बनाए जाने का प्रस्ताव है। सरकार ने कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए कांग्रेस अध्यक्षा श्रीमती सोनिया गांधी की अध्यक्षता वाली राष्ट्रीय सलाहकार परिषद द्वारा की गई सिफारिशों पर अमल करना शुरू कर दिया है। राष्ट्रीय सलाहकार परिषद की सिफारिश के अनुसार महिला और बाल विकास मंत्रालय एक राष्ट्रीय योजना

बनाने जा रही है, जिसमें विभिन्न मंत्रालयों के सुझावों को शामिल किया जाएगा।

सरकार की काफी कोशिशों के बाद भी महिला और बाल विकास मंत्रालय तथा केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय को कन्या भ्रूण हत्या होने की लगातार शिकायतें मिल रही हैं। केन्द्र सरकार जिन राज्यों में घटते लिंगानुपात को देख कर हरकत में आई है, वहां लड़के–लड़कियों के बीच बढ़ते अंतर का एक और कारण सामने आया है। केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय के ताजा आंकड़ों के अनुसार मार्च 2011 तक जन्म से पूर्व लिंग परीक्षण करने वालों के विरूद्ध 805 मामले दर्ज हुए, लेकिन इसमें से केवल 55 मामलों पर ही कार्यवाही आगे बढ़ सकी यानि मात्र 6 फीसदी डॉक्टरों को ही PC&PNDT ACT -1994 के अन्तर्गत आरोपी बनाया गया। अन्य मामले पर्याप्त सबूत के अभाव में बंद कर दिए गए।

भ्रूण हत्या के मुख्य कारण

हमारी सामाजिक एवं सांस्कृतिक विचारधारा, अंधविश्वास, पितृसत्तात्मक समाज के नियम तथा मानसिकता सभी मिलकर स्त्रियों के साथ विभेदकारी व्यवहार करने के लिए एक पृष्ठभूमि तैयार करती हैं। ऐसा माना जाता है कि बदलते आधुनिक परिवेश में परम्परागत, रूढ़िवादी विचारधारा में बदलाव आया है लेकिन वास्तविक रूप में समाज में लड़कियों के प्रति आज भी पक्षपातपूर्ण और संवेदनहीन व्यवहार किया जाता है।

भारत में कन्या भ्रूण हत्या के कुछ प्रमुख कारण इस प्रकार हैं –

1. अशिक्षा, निर्धनता, बेरोजगारी
2. समाज में स्त्रियों के प्रति असुरक्षित वातावरण
3. ईज्जत और अभिमान की भावना
4. बाल–विवाह, दहेज–प्रथा, अनुलोम विवाह
5. पितृसतात्मक सामाजिक व्यवस्था और अंधविश्वास
6. बलात्कार
7. महिलाओं के प्रति हिंसा, अत्याचार और यौन शोषण
8. महिलाओं में एनिमिया रोग की समस्या
9. महिलाओं को पर्याप्त पोषणयुक्त एवं संतुलित भोजन नहीं मिलना
10. परिवार नियोजन के साधनों की विफलता
11. लिंग आधारित भेदभाव
12. सम्मान की रक्षा हेतु हत्या (ऑनर किलिंग)
13. चिकित्सकों में असंवेदनशीलता
14. चिकित्सा क्षेत्र में अत्याधुनिक तकनीकों का प्रयोग
15. चिकित्सकीय पेशे का व्यवसायीकरण
16. गर्भस्थ शिशु के लिंग जॉच के लिए एम्निओसेन्टेसिस, कोरिओनिक विलस बायोप्सी और सर्वाधिक चर्चित

तकनीक अल्ट्रासोनोग्राफी का अधिक इस्तेमाल

कन्या भ्रूण हत्या संबंधित कानून

कन्या भ्रूण हत्या की समस्या को केवल कानून के भरोसे रहकर समाप्त नहीं किया जा सकता है। जनसामान्य में इसके लिए सामाजिक जनचेतना जाग्रत करना भी जरूरी है।

भारतीय समाज में धार्मिक, नैतिक और विधिक दृष्टिकोण से कन्या भ्रूण हत्या एक अपराध माना जाता है। विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों में भी उल्लेख किया गया है कि कन्या वध या कन्या भ्रूण हत्या ब्रह्म हत्या के समान ही है जिसका कोई प्रायश्चित नहीं है।

विधिक दृष्टिकोण से कन्या भ्रूण हत्या की रोकथाम के लिए विशेषतः निम्न अधिनियमों में विशेष प्रावधान किये गये हैं –

1. भारतीय दण्ड संहिता 1860
2. गर्भधारण पूर्व और प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994
3. गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971

(1) भारतीय दण्ड संहिता 1860

भारतीय दण्ड संहिता 1860 के अन्तर्गत वह गर्भपात जो किसी स्त्री का जीवन बचाने के उद्देश्य से सद्भावनापूर्वक क्रियान्वित नहीं किया जायेगा दण्डनीय अपराध माना जाएगा है। भले ही यह अपराध किसी भी कारणवश स्त्री की सहमति के बिना किया गया है। भारतीय दण्ड संहिता 1860 के अन्तर्गत किसी व्यक्ति द्वारा शिशु का जीवित जन्म लेने से रोकने या जन्म के बाद उसकी मृत्यु कारित करने के उद्देश्य से किया गया किसी प्रकार का कार्य दण्डनीय अपराध घोषित किया गया है तथा ऐसा अपराध कारित करने वाले व्यक्ति को दंडित करने के लिए प्रावधान किये गये हैं।

(2) गर्भधारण पूर्व और प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994

यह अधिनियम गर्भस्थ शिशु के लिंग की जाँच और कन्या भ्रूण हत्या का पूर्ण प्रतिरोध करता है। यह अधिनियम उपबंधित करता है कि अनुवांशिक सलाहकार केन्द्र या आनुवांशिक प्रयोगशाला या क्लिनिक, प्रसव पूर्व निदान तकनीक का प्रयोग भ्रूण के लिंग चयन के लिए नहीं करेगा।

परन्तु कुछ विशेष परिस्थितियों में प्रसव पूर्व भ्रूण की जाँच करने के लिए अनुमति प्रदान की गई है –

1. गुणसुत्रों की असामान्यता
2. आनुवांशिक शारीरिक बीमारियां
3. हिमोग्लोबिन संबंधी बीमारियां
4. लिंग संबंध आनुवांशिक बीमारियां

5. जन्मजात असामान्यताएं

6. केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड द्वारा बनाई गई कोई अन्य असामान्यताएं

किसी भी व्यक्ति, संगठन, आनुवांशिक परामर्श केन्द्र, आनुवांशिक प्रयोगशाला, आनुवांशिक क्लिनिक द्वारा प्रसव पूर्व या गर्भधारण पूर्व लिंग जाँच अथवा लिंग चयन संबंधी कोई भी विज्ञापन किसी भी रूप में प्रकाशित, प्रसारित, वितरित करना दण्डनीय अपराध माना गया है।

कोई भी व्यक्ति, जिसमें प्रसव पूर्व निदान प्रक्रिया करने वाला व्यक्ति भी शामिल है, संबंधित गर्भवती महिला या उसके किसी रिश्तेदार को या अन्य किसी व्यक्ति को शब्दों द्वारा, संकेतों द्वारा, अन्य किसी प्रकार से गर्भस्थ भ्रूण के लिंग के बारे में नहीं बतायेगा।

इस अधिनियम में एक केन्द्रीय पर्यवेक्षी मंडल तथा समुचित प्राधिकारी और सलाहकारी समिति की स्थापना का प्रावधान किया गया है जिनका कार्य कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए प्रभावी कदम उठाना है।

यदि कोई चिकित्सकीय विशेषज्ञ, स्त्री रोग विशेषज्ञ, पंजीकृत चिकित्सकीय व्यवसायी इस अधिनियम के प्रावधानों का प्रथम बार उल्लंघन करे तो उस पर 3 वर्ष तक के कारावास या रू. 10000 के जुर्माने या दोनों ही भुगतने का दण्ड दिया जा सकता है और अनुगामी दोष सिद्धी पर उसे 5 वर्ष तक के कारावास/50000 रूपये तक के जुर्माने या दोनों का भुगतान करना पड़ सकता है।

समुचित प्राधिकारी द्वारा पंजीकृत चिकित्सक के प्रथम बार दोषी सिद्ध होने पर राज्य चिकित्सा परिषद से 5 वर्ष के लिए उसका पंजीकरण रद्द किया जायेगा और अनुगामी अपराध के लिए दोष सिद्ध होने पर चिकित्सक का पंजीकरण स्थायी रूप से रद्द कर दिया जायेगा।

कोई भी व्यक्ति अधिनियम की धारा 4(2) के अलावा अन्य किसी प्रयोजन के लिए प्रसव पूर्व लिंग जाँच या प्रसव पूर्व गर्भपात करता है तो वह प्रथम अपराध होने पर 3 साल तक का कारावास/50,000 रूपये तक का जुर्माना अथवा दोनों से दण्डित होगा।

गर्भधारण पूर्व और प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994 के अधीन प्रत्येक अपराध –

1. अजमानतीय अपराध
2. अक्षमनीय अपराध है।

किसी भी न्यायालय द्वारा इस अधिनियम के अधीन निम्नलिखित की शिकायतों पर ही मामले का प्रसंज्ञान होगा –

1. न्यायिक मजिस्ट्रेट (प्रथम वर्ग) या मेट्रोपोलिटिन मजिस्ट्रेट द्वारा प्रसंज्ञान किया जायेगा
2. समुचित प्राधिकारी द्वारा परिवाद पेश किये जाने पर
3. किसी व्यक्ति द्वारा परिवाद पेश किये जाने पर जिसने की समुचित प्राधिकारी को 15 दिन का नोटिस दे दिया है

(3) गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971

इस अधिनियम को पारित करने के मुख्यतः दो कारण थे। प्रथम गर्भवती महिला एवं शिशु की रक्षा करना

तथा द्वितीय परिवार नियोजन को बढ़ावा देना।

गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971 के अन्तर्गत निम्न विशेष परिस्थितियों में पंजीकृत चिकित्सक द्वारा गर्भ समापन किया जा सकेगा –

1. गर्भ का चिकित्सकीय समापन गर्भवती स्त्री की सहमति से ही किया जा सकेगा।
2. यदि गर्भवती स्त्री अवयस्क है या मानसिक रोगी है तो ऐसी स्थिति में गर्भ का चिकित्सकीय समापन करने से पूर्व उसके संरक्षक की लिखित स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक है।
3. यदि पंजीकृत चिकित्सकों द्वारा यह राय दी गयी है कि गर्भ के बने रहने पर गर्भवती स्त्री के जीवन को खतरा हो सकता है या स्त्री का शारीरिक, मानसिक आघात हो सकता है या गंभीर प्रकार से अयोग्य विकलांग शिशु का जन्म होगा।
4. बलात्कार के परिणामस्वरूप स्त्री के गर्भवती होने पर
5. परिवार नियोजन की सफलता

इस प्रकार उपरोक्त परिस्थितियों में गर्भ का चिकित्सकीय समापन पंजीकृत चिकित्सक के द्वारा ही किया जा सकेगा।

न्यायपालिका की भूमिका

समय–समय पर भारतीय न्यायपालिका ने भी कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए कठोर दिशा–निर्देश जारी किये हैं। उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि राज्य सरकार सक्रिय होकर अल्ट्रासाउन्ड मशीनों के पंजीकरण का कार्य करें। न्यायालय ने इस बारे में असफल रहने वाले अधिकारियों एवं कर्मचारियों को पद से तुरन्त हटा देने की सिफारिश की है।

मुम्बई उच्च न्यायालय ने एक वाद में कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के संबंध में आदेश जारी करते हुए कहा कि – यदि किसी के विरूद्ध कन्या भ्रूण हत्या के कार्य करने का प्रथम दृष्टया साक्ष्य उपलब्ध हो तो ऐसे कार्य करने वाले डायग्नोस्टिक सेंटर की अनुज्ञप्ति रद्द की जानी चाहिए।

हरियाणा के फरीदाबाद जिला न्यायलय ने कन्या भ्रूण हत्या को रोकने संबंधी सराहनीय कार्य किया है। जिला न्यायालय ने एक चिकित्सक तथा उसके सहयोगी के दोषी साबित हो जाने पर 2 वर्ष का कारावास तथा 5000 रूपये के जुर्मान की राशि से दण्डित करने का उदाहरण प्रस्तुत किया है।

विभिन्न कानूनों के बावजूद भी छोटे–बड़े शहरों, गांवों में अमानवीय स्तर पर फलफूल रहा लिंग परीक्षण व लिंग चयनित गर्भपात का व्यवसाय मुनाफे का सौदा साबित हो रहा है। अतः भारत में शिशु लिंगानुपात और महिलाओं की स्थिति संतोषजनक नहीं है। इससे यह पता चलता है कि हमारी प्रशासनिक एवं कानूनी कार्यवाहियां अत्यंत ही लचर स्थिति में है।

कन्या भ्रूण हत्या – राजस्थान के विशेष संदर्भ में

जनगणना 2011 के अनुसार राजस्थान की कुल जनसंख्या 68621012 है जिनमें 35620086 पुरूष तथा

33000926 महिला हैं। 6 वर्ष तक की आयु के शिशु का लिंगानुपात 883 है जबकि 2001 में यह आंकड़ा 909 था। इस प्रकार वर्तमान जनगणना में महिला–पुरूष का लिंगानुपात 922 से बढ़कर 926 हो गया।

यूनिसेफ द्वारा मातृत्व एवं नवजात शिशु स्वास्थ्य पर जारी की गयी रिपोर्ट में कहा गया है कि – " राजस्थान राज्य में प्रत्येक घंटे में 13 ऐसे बच्चों की मौत हो जाती है जो कि अपनी आयु का एक साल भी पूरा नहीं कर पाते हैं।"

राजस्थान में हर वर्ष 5300 महिलाओं की गर्भावस्था संबंधी जटिलताओं के कारण मृत्यु हो जाती है। जन्म के एक वर्ष के भीतर 98500 शिशु और जन्म के एक सप्ताह के भीतर 50700 शिशु अकाल मृत्यु के शिकार हो जाते हैं।

शिक्षा को कन्या हत्या भ्रूण हत्या पर अंकुश का बड़ा माध्यम माना गया है लेकिन लिंगानुपात के नये आंकड़ों की हकीकत बिल्कुल विपरीत है। राजस्थान राज्य के गत दो दशक के जनगणना आंकड़ों के अनुसार जिन जिलों में साक्षरता की दर में वृद्धि हुई है उनमें लड़कों की तुलना में लड़कियों के जन्म में कमी दर्ज की गई है। विशेषज्ञों का मत है कि शिक्षित होने के बाद लोगों में भ्रूण हत्या के खिलाफ जागरूकता बढ़ने के स्थान पर लोग भ्रूण जांच और भ्रूण हत्या के नित नये तरीको के जानकार हो रहे हैं।

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने राजस्थान में घटते लिंगानुपात पर चिंता जाहिर करते हुए राज्य सरकार को एक पत्र लिखा है कि – "हमें उन लोगों के खिलाफ सख्त कार्यवाही करनी चाहिए जो जन्म से पूर्व बच्चों का लिंग परीक्षण करवाते हैं अथवा उन्हें जन्म लेने से पहले की मार डालते हैं।"

राजस्थान प्रदेश में 1783 सोनोग्राफी केन्द्र पंजीकृत हैं। इनमें से 1661 निजी क्षेत्र और 122 सरकारी क्षेत्र के हैं। पिछले वर्ष राज्य, जिला व उपखण्ड निरीक्षण दलों ने इनमें से 702 सोनोग्राफी केन्द्रों का ही निरीक्षण किया है। शेष 1000 से ज्यादा केन्द्रों का तो निरीक्षण ही नहीं हुआ है। इस निरीक्षण के बाद 161 मामले न्यायालयों में पेश किये गये तथा 20 मामले अभी भी लम्बित हैं।

राष्ट्रीय बाल आयोग के सदस्य विनोद कुमार टिक्कू और दिनेश लहोरिया द्वारा पिछले वर्ष राजस्थान में बाल शोषण के विषय पर एक रिपोर्ट तैयार की गयी थी। रिपोर्ट के अनुसार राजस्थान के कई जिलों में नवजात बालिकाओं को मारने का अंतहीन सिलसिला धड़ल्ले से चल रहा है। यहां नवजात बालिका शिशु को अफीम खिलाकर और मुंह में कपड़ा ठूंस कर मारा जाता है। जैसलमेर सहित कई जिला अस्पतालों में बेटियां जन्म तो लेती हैं, प्रसूताएं जननी सुरक्षा योजना के तहत आर्थिक सहायता भी हासिल कर लेती हैं लेकिन घर पहुंचने के बाद बेटियों की कहानी खत्म हो जाती है।

राजस्थान सरकार द्वारा कन्या भ्रूण हत्या को रोकने की दिशा में जुलाई 2010 में चिकित्सा, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग की ओर से अधिकृत – www.hamaribeti.nic.in वेबसाइट शुरू की गई। इस वेबसाईट पर कोई भी व्यक्ति अपने आसपास क्षेत्र में किसी निजी अस्पताल या सोनोग्राफी सेंटर पर लड़का या लड़की के भ्रूण की जांच के लिए चोरी छुपे हो रहे लिंग परीक्षण की ऑनलाईन शिकायत दर्ज कर सकता है। शिकायत दर्ज होने पर संबंधित जिले के प्रशासनिक व चिकित्सा अधिकारी उसकी सत्यता की

जांच करते हैं और यदि शिकायत सही पायी जाती है तो दोषी के खिलाफ PC&PNDT ACT 1994 के तहत कार्यवाही की जाती है।

इस बारे में केन्द्रीय स्वास्थ्य सचिव के. चन्द्रमौलि ने कहा है कि – "ऑनलाईन सूचना दर्ज करने के लिए प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना चाहिए ताकि पंजीकृत क्लिनिक की जानकारी के साथ मशीनों को जब्त करने के लिए की गई कार्यवाही, दोषियों के खिलाफ दर्ज मामलों के बारे में जानकारी को सार्वजनिक किया जा सके।"

महाराष्ट्र में कोल्हापुर और पुणे मॉडल के आधार पर अगर सोनोग्राफी मशीनों पर साइलेंट ऑब्जरवर लगाए जाएं तो राजस्थान में भी बेटियों को बचाया जा सकता है।

क्या है साईलेंट ऑब्जर्वर

यह एक इलैक्ट्रानिक उपकरण है जिसे साइलेंट ऑब्जर्वर एण्ड एक्टिव ट्रेकर नाम दिया गया है। इसे सोनोग्राफी मशीन में लगाया जाता है। इसके बाद उस मशीन पर किया गया काम स्वतः ही रिकार्ड हो जाता है। इसे कलेक्टर अपने कार्यालय में बैठकर मॉनिटर कर सकता है।

विंडोज प्लेटफार्म पर कार्य करने वाले साइलेंट ऑब्जर्वर सिस्टम से सोनोग्राफी विडियो को रिकार्ड किया जा सकता है पर सोनोग्राफी करने वाले चतुराई के साथ लिंग परीक्षण के दौरान सर्वर का तार निकाल देते हैं। पुणे की आईटी कम्पनी मैगनम ऑपस ने इसका भी हल निकाला और एडवांस एक्टिव ट्रेकर तैयार किया। साइलेंट ऑबजर्वर के साथ किसी भी प्रकार की छेड़छाड़ होने पर एडवासं एक्टिव ट्रेकर अधिकारियों को तुरंत एसएमएस कर देता है।

राजस्थान सरकार द्वारा कन्या भ्रूण हत्या रोकने के लिए की गई पहल –

1. PC&PNDT Act 1994 की क्रियान्विति हेतु उपखण्ड अधिकारी, समुचित प्राधिकारी नियुक्त।
2. PC&PNDT Inspection Report (PIR) व्यवस्था लागू
3. राजस्थान मेडिकल कौंसिल द्वारा 8 चिकित्सकों के पंजीयन निलम्बित
4. गैर–सरकारी संगठनों की निरीक्षण एवं जागरूकता अभियानों में भागीदारी सुनिश्चित।
5. मुख्य स्वास्थ्य एवं चिकित्सा अधिकारी (CM–HO) राज्य समुचित प्राधिकारी के प्राधिकृत अधिकारी के रूप में अधिकृत।
6. हमारी बेटी एक्सप्रेस चार मोबाईल जागरूकता वाहन।
7. राजस्थान सरकार के सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग के द्वारा संचालित योजना के अन्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले बी.पी.एल. परिवार की किन्हीं दो कन्याओं के विवाह के लिए निम्न अनुदान दिया जाता है –
   - 18 वर्ष आयु पूर्ण होने पर विवाह के लिए 10,000 रूपये।
   - उच्च माध्यमिक उत्तीर्ण 18 वर्ष की आयु पूर्ण कन्या के विवाह के लिए 15,000 रूपये।

- स्नातक उत्तीर्ण 18 वर्ष की आयु पूर्ण कन्या के विवाह के लिए 20,000 रूपये का अनुदान दिया जाता है।

8. राज्य में लिंग परीक्षण पर प्रभावी नियंत्रण रखने के लिए राज्य स्तरीय टास्क फोर्स का गठन करने तथा गैर कानूनी रूप से लिंग परीक्षण करने वाले के बारे में सूचना देने वाले व्यक्ति को देय पुरूस्कार की राशि को बढ़ाकर 1,00,000 रूपये करने की घोषणा।
9. जननी शिशु सुरक्षा योजना के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु सभी चिकित्सा महाविद्यालयों एवं संबद्ध चिकित्सालयों में कुल 400 महिला एवं 300 शिशु शैय्याओं की वृद्धि करने का लक्ष्य निर्धारित।
10. राज्य में आगामी वर्षों में 3000 उप–स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना का लक्ष्य निर्धारित।
11. राज्य में कार्यरत लगभग 180000 आंगनबाड़ी कार्यकर्त्ताओं, सहायिकाओं, साथिनों एवं आशा सहयोगिनियों को देय मानदेय में 10 प्रतिशत की बढ़ोतरी करने का लक्ष्य।

राजस्थान जननी शिशु सुरक्षा योजना

सरकारी अस्पतालों, चिकित्सालयों में प्रसव को प्रोत्साहित करने के लिए केन्द्र सरकार की जननी सुरक्षा योजना को राजस्थान सरकार ने प्रदेश में 12 सितम्बर 2011 से पहली बार "राजस्थान जननी–शिशु सुरक्षा योजना" के रूप में प्रारम्भ किया है। योजना के अन्तर्गत सभी प्रसूताओं एवं बीमार नवजात शिशुओं को 30 दिनों तक सरकारी चिकित्सा संस्थानों में सभी प्रकार की सेवाएं तथा दवाईयां, जांच, भोजन और परिवहन इत्यादि उपलब्ध करवायी जा रही हैं। सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्र की प्रसूताओं को 1400 रूपये एवं शहरी क्षेत्र की प्रसूताओं को 1000 रूपये प्रोत्साहन राशि के रूप में भुगतान किया जा रहा है।

उपलब्धि

इस योजना के अन्तर्गत 12 सितम्बर 2011 से मार्च 2012 तक 430235 महिलाएं एवं 132387 नवजात शिशु लाभान्वित हुए हैं।

कन्या भ्रूण हत्या रोकने के उपाय

कानून को व्यावहारिक रूप में क्रियान्वित करते हुए निम्न उपायों द्वारा समाज की मानसिकता में सुधार किया जा सकता हैः

1. समाज में महिलाओं का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है लेकिन कन्या भ्रूण हत्या जैसी गंभीर समस्या के कारण महिलाओं के अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो गया है। समाज में इस समस्या के प्रति जन जागृति फैला कर जिसके लिए नुक्कड़ नाटक, परिचर्चा, प्रदर्शनी, कार्यशाला, सेमिनार आदि का आयोजन किया जाना चाहिए।
2. आधुनिक सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं के प्रति भेदभावपूर्ण तथा पक्षपातपूर्ण व्यवहार की मानसिकता

को समाप्त करने के लिए महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति को सुदृढ़ करने के साथ ही साथ वैश्वीकरण के दौर में विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित कर।

3. महिलाओं को अधिक से अधिक शिक्षित करने के अलावा उनके शौक्षणिक योग्यता के स्तर में वृद्धि करने के प्रयास कर महिलाओं को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने की कोशिश होनी चाहिए ताकि उन्हें रोजगार के पर्याप्त सुअवसर उपलब्ध हो सकें।
4. कन्या भ्रूण हत्या की रोकथाम के लिए कन्या भ्रूण हत्या संबंधी विषय को पाठ्यक्रम में शामिल कर विद्यार्थियों को इस समस्या के विभिन्न पहलुओं के बारे में जानकारी दी जानी चाहिए जिससे कि वे अपने जीवनकाल में ऐसी अमानवीय त्रुटि नहीं करें।
5. विधिक दृष्टिकोण से कन्या भ्रूण हत्या के अपराध की रोकथाम के लिए गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971 तथा गर्भधारण पूर्व तथा प्रसव पूर्व तकनीक अधिनियम 1994 में व्याप्त अन्तर्विरोधी उपबन्धों में सुधार करते हुए अधिक कठोर बनाये जाने की आवश्यकता है।
6. केन्द्रीय पर्यवेक्षी बोर्ड तथा राज्य सलाहकारी समिति का भ्रूण लिंग जांच करने वाले आनुवांशिक परामर्श केन्द्रों, लैबोरेट्रियों और क्लिनिकों में कार्य करने वाले व्यक्तियों और चिकित्सकों पर उचित नियन्त्रण होना चाहिए। बोर्ड एवं समिति के कार्यों का समय–समय पर विश्लेषण किया जाना चाहिए।
7. गर्भवती महिला के भ्रूण की लिंग जाँच, लिंग चयन तथा अवैध गर्भपात करने में उपयोग लिये जाने वाले उपकरणों को क्रय–विक्रय करने वाली फर्मों पर पूर्ण नियन्त्रण करने की आवश्यकता है।
8. दहेज प्रथा और बाल विवाह जैसी कुरीतियों को समाप्त करते हुए सामूहिक विवाह का अयोजन किया जाना सराहनीय कदम होगा।
9. पुरूष प्रधान समाज एवं लैंगिक भेदभाव की मानसिकता को समाप्त करने पर बल दिया जाना चाहिए।
10. कन्या भ्रूण हत्या पर रोक लगाने के लिए समाचार पत्रों, विज्ञापनों, टेलिफिल्म, पोस्टर, बैनर आदि माध्यमों द्वारा आमजन में जागरूकता पैदा की जानी चाहिए।
11. चिकित्सकों को अपने व्यवसाय के प्रति समर्पित एवं कर्त्तव्यनिष्ठा की भावना से प्रेरित होकर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। वैश्वीकरण के दौर में चिकित्सकों द्वारा अपनायी जा रही व्यावसायिक मानसिकता को सामाप्त करने के लिए प्रयास किये जाने चाहिए।

सुझाव

भारत सरकार ने 2011–12 तक बच्चों का लिंगानुपात 935 और 2016–17 तक इसे बढ़ाकर 950 करने का लक्ष्य रखा है। कन्या भ्रूण हत्या में कमी लाने और लिंगानुपात में सुधार हेतु सुझाव निम्नलिखित है –

1. गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य को उत्तम बनाए रखने तथा गर्भ में पल रहे भ्रूण के सर्वोच्च विकास के लिए महिलाओं को स्वास्थ्यवर्द्धक, पौष्टिक एवं संतुलित आहार ग्रहण करना चाहिए।
2. स्वास्थ्य शिशु और समय पर शिशु के जन्म के लिए गर्भवती माता के स्वास्थ्य की समय–समय पर जांच की जानी चाहिए।

3. महिलाओं का उत्तम स्वास्थ्य, सुदृढ़ एवं स्वस्थ शिशु के लिए आवश्यक है।
4. गर्भवती महिला को आयरन, कैल्शियम, विटामिन युक्त भोजन नियमित रूप से दिया जाना चाहिए।
5. प्रसव के उपरांत भी माता एवं नवजात शिशु का विशेष ध्यान रखना परम आवश्यक है।
6. शहरी क्षेत्र के साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्वास्थ्य सेवाओं का विकास एवं विस्तार किया जाना चाहिए। गर्भवती महिलाओं और नवजात शिशुओं की अभावग्रस्त इलाकों में बेहतर स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवाऐं उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
7. सरकारी, गैर–सरकारी अस्पतालों में गर्भवती महिलाओं एवं नवजात शिशुओं का रिकार्ड रखने पर निगरानी को बढाया जाना चाहिए।
8. 2011 की जनगणना के अनुसार केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा संचालित परिवार नियोजन कार्यक्रमों में सफलता, प्रतिबद्धता का अभाव रहा है। अतः समय समय पर परिवार नियेाजन सम्बन्धी शिविरों का आयोजन कर भिन्न–भिन्न माध्यमों द्वारा आवश्यक जानकारी प्रदान की जानी चाहिए।
9. हमें बच्चों एवं युवा पीढ़ी को नैतिकता युक्त शिक्षा, घर में अच्छे संस्कार और अच्छा सामाजिक परिवेश उपलब्ध करना होगा।

आज प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएं पुरूषों के स्पर्धा में आगे बढ़ रही हैं। महिलाएं, पुरूष एकाधिकार के विभिन्न क्षेत्रों को भेदती नजर आ रही हैं। हम कह सकते हैं कि महिला वर्ग की सामाजिक दृष्टि से प्रतिष्ठा एवं सम्मान में वृद्धि हुई है।

ऐसे में हम आखिर कब तक यूँ ही अपने आसपास चल रहे "लाईसेंसधारी कत्लगाहों' को नजरअंदाज करते रहेंगे?

मानव जाति के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए जनहित में प्रत्येक नागरिक को बुचड़खाने में परिवर्तित हो रहे घरों को फिर से नन्हीं किलकारियों, मनमोहक मुस्कुराहटों से आबाद करने के लिए हमें सक्रिय रूप से प्रयास करना होगा।

सदंर्भः

1. दिलायर्स क्लैस्टिक, 2 नवंबर 2001, पृ 5।
2. जार्ज साबू, फीमेल फिटीसाइड इन इण्डिया, हेल्थ सेक्शन, दिसम्बर 2000, पृ. 25
3. टाइम्स ऑफ इण्डिया, जून 1982
4. डीकैन हैराल्ड, शनिवार, 2 जून 2001, पृ. 4
5. दैनिक भास्कर, 30 सितम्बर 2012
6. राजस्थान पत्रिका, 25 सितंबर, 2010
7. दैनिक भास्कर, 26 मार्च 2012
8. आउटलुक, अगस्त 2010, पृ 22
9. राजस्थान पत्रिका, 22 अप्रैल 2011

10. राजस्थान पत्रिका, 25 अक्टूबर 2012
11. राष्ट्रीय सहारा, 26 जनवरी 2009
12. राजस्थान पत्रिका, 4 सितम्बर 2011
13. राजस्थान पत्रिका, 7 अप्रैल 2011
14. दैनिक भास्कर, 2 अप्रैल 2012
15. राजस्थान पत्रिका, 7 अप्रैल 2010
16. राजस्थान पत्रिका, 20 अक्टूबर 2012
17. राजस्थान पत्रिका, 10 दिसम्बर 2011
18. राजस्थान पत्रिका, 22 अप्रेल 2011
19. दैनिक भास्कर, 2 अप्रैल 2012
20. दैनिक भास्कर, 27 दिसम्बर 2011
21. यत्पांय ब्रह्मात्याया द्विगुण गर्भपातने। प्रायश्चितं न तस्यास्ति तस्यास्त्माओं विधियते – मानस 4120
22. भारतीय दण्ड संहिता 1860 की धारा 312, 313
23. भारतीय दण्ड संहिता 1860 की धारा 315, 316
24. PC & PNDT Act 1994 Sec. 6
25. PC & PNDT Act 1994 Sec. 4(2)
26. PC & PNDT Act 1994 Sec. 22(1), (2), (3)
27. PC & PNDT Act 1994 Sec. 5(2)
28. PC & PNDT Act 1994 Sec. 7
29. PC & PNDT Act 1994 Sec. 17
30. PC & PNDT Act 1994 Sec. 23(1)
31. PC & PNDT Act 1994 Sec. 23(2)
32. PC & PNDT Act 1994 Sec. 23(3)
33. PC & PNDT Act 1994 Sec. 27
34. गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम, 1971
35. CHEAT एवं अन्य v/s भारत संघ अन्य (2001) 5 एस.सी.सी. 577
36. मालपति इनकार्टिलीटी क्लिनिक प्राइवेट लि. पंच अन्य v/s प्रोप्रिल्ट आथरिटी P.N.D.T. एक्ट एवं अन्य, AIR 2005, बाम्बे 26
37. हिन्दुस्तान, लखनऊ 30 मार्च 2006
38. सूचना एवं जनसम्पर्क निदेशालय, राजस्थान सरकार
39. राजस्थान पत्रिका, 31 दिसम्बर 2011
40. राजस्थान पत्रिका, 31 जनवरी 2009

शिक्षित एवं अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन

ब्रजेश कुमार वर्मा

शिक्षा वस्तुतः जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है जो कि अपने वास्तविक अर्थ में सीखने से जुड़ी है। यह मनुष्य द्वारा अपने आंतरिक एवं वाहय परिवेश के साथ समायोजित होने की कला है। शिक्षा जीवन का वह आईना है जिसमें मनुष्य अपनी योग्यताओं और क्षमताओं को प्रतिबिम्ब के रूप में देखता है। ये प्रतिबिम्व ही संसाधन के रूप में मानव व्यक्तित्व के विकास का मार्ग प्रशस्त करते हैं । गॉधी जी ने शिक्षा के महत्व को स्पष्ट करते हुये कहा है कि शिक्षा से मेरा अभिप्राय मनुष्य के शरीर ,मन, हृदय और आत्मा के गुणों का सर्वांगीण विकास करना है। किसी राष्ट्र का भविष्य उसके द्वारा हासिल किये गये शैक्षिक स्तर पर ही निर्भर करता है। इस तरह से प्रत्येक राष्ट्र के लिये शिक्षा वह प्रथम सीढ़ी है जिसे सफलता पूर्वक पार करके ही कोई राष्ट्र अपने अभीष्ट लक्ष्य तक पहुॅचता है। राष्ट्रीय जीवन के साथ जितना धनिष्ठ सम्बन्ध प्राथमिक शिक्षा का है उतना माध्यमिक व उच्च शिक्षा का नहीं है। प्राथमिक शिक्षा का राष्ट्रीय विचारधारा और चरित्रनिर्माण में महत्वपूर्ण योगदान है। इस प्राथमिक शिक्षा की तैयारी के लिये पूर्व प्राथमिक शिक्षा का प्रत्यय विकसित हुआ है ।

मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए गये शोध कार्यों से यह बात निर्विवाद रूप से स्पष्ट हो चुकी है कि जन्मोपरान्त मानव विकास की पहली अवस्था अर्थात शैशवावस्था का बालक के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। इस अवस्था के अन्तर्गत 0–5 वर्ष के बालक आते हैं। इस समय बालक का विकास तीव्र गति से होता है। शैशवावस्था मानव जीवन का आधार होती है। जे न्यूमैन का कहना है कि प्रारंभिक 5 वर्षों में बालक का शरीर तथा मस्तिष्क अत्यन्त ग्रहणशील होता है। प्रख्यात मनोवैज्ञानिक सिगमण्ड फ्रायड का तो यहाँ तक कहना है कि मानव को जो कुछ भी बनना होता है वह प्रारम्भ के 5 वर्षों में ही बन जाता है। निश्चित रूप से बच्चे के लिये यह समय अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इस अवस्था के अन्तर्गत बालक को जो शिक्षा औपचारिक रूप से दी जाती है उसी को हम पूर्व प्राथमिक शिक्षा के नाम से सम्बोधित करते हैं। यह बालक की पूरी शिक्षा की आधारशिला होती है।

बारबोरा ,दास (2001) ने अपने अध्ययन " एन एन्फ्लूऐंस ऑफ पैरेन्ट्स लिटरेसी आन द एकेडेमिक एचिवमेंट ऑफ चिल्ड्रेन टू द बैकवर्ड क्लासेस " में पाया कि –

1. शिक्षित अभिभावकों के बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि का स्तर उच्च होता है ।
2. अभिभावकों का शैक्षिक स्तर और सुविधाओं का अभाव छात्रों के कम शैक्षिक उपलब्धि का एक महत्वपूर्ण कारण है ।
3. शिक्षित अभिभावक अपने बच्चों की शिक्षा के लिये अधिक जागरूक हैं तथा वे अपने बच्चों को शिक्षा के लिए उचित निर्देशन तथा सुविधायें देने का प्रयास करते हैं ।

कफोजियॉ, कादिर एवं सारिका (2009) ने पूर्व प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों की शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति का अध्ययन किया। इस अध्ययन का उद्देश्य पूर्व प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों में शिक्षा के प्रति अभिभावकों

की अभिवृत्ति का अध्ययन करना था। अध्ययन में 200 अभिभावकों का चयन किया गया , जिसमें 100 मातायें तथा 100 पिता थे, जिनके बालक 3–6 आयु वर्ग के थे। इन बालकों में आधे आंगनबाड़ी जाने वाले बच्चों के अभिभावक तथा आधे पूर्व प्राथमिक विद्यालयों में जाने वाले बालकों के अभिभावक थे। इस अध्ययन के परिणामस्वरूप पाया गया कि माता तथा पिता दोनों मानते हैं कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा केन्द्र में प्राथमिक शिक्षा की तैयारी कराया जाता हैं।

भारत में पहले पूर्व प्राथमिक शिक्षा जैसी कोई अवधारणा नहीं थी। पूर्व प्राथमिक शिक्षा एक पाश्चात्य प्रत्यय है। इसका जन्मदाता फ्राबेल को माना जाता है। भारत में पूर्व प्राथमिक शिक्षा की शुरूआत करने और शिशु विद्यालयों को लोकप्रिय बनाने का श्रेय ईसाई मिशनरियों को है, किन्तु वर्तमान समय में भारत में जगह जगह पर पूर्व प्राथमिक विद्यालय खोले जा रहे हैं, जिससे स्पष्ट है कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा के महत्व को हमारे देश में तेजी से स्वीकार किया जाने लगा है। सरकार द्वारा हीं नहीं बल्कि गैर सरकारी संगठनों एवं निजी प्रयासों से भी पूर्व प्राथमिक विद्यालय खोले जाने लगे हैं। लेकिन पूर्व प्राथमिक विद्यालय खुल जाने मात्र से ही उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती है। बच्चों के अभिभावकों की अभिवृत्ति पर ही पूर्व प्राथमिक शिक्षा की सफलता निर्भर करती है। अभिभावक अपने बालकों को विद्यालय भेजेंगे, तभी वे शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। पूर्व प्राथमिक विद्यालयों में 3–6 आयु वर्ग के बालक शिक्षा ग्रहण करते हैं, लेकिन बालकों को विद्यालय भेजने का दायित्व उनके अभिभावकों का ही होता है। पूर्व प्राथमिक स्तर पर बालक अपने आप स्वयं निर्णय नहीं ले पाता है। उसके भविष्य के विषय में उसके अभिभावक ही निर्णय लेते हैं। उनके लिये सही व गलत का निर्णय अभिभावकों के द्वारा ही लिया जाता है । अतः पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति जानने हेतु ही यह शोध अध्ययन किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. शिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
2. अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनायें

1. शहरी शिक्षित अभिभावकों एवं शहरी अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. ग्रामीण शिक्षित अभिभावकों एवं ग्रामीण अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. शहरी शिक्षित अभिभावकों एवं ग्रामीण शिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. शहरी अशिक्षित अभिभावकों एवं ग्रामीण अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. शहरी अभिभावकों एवं ग्रामीण अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अध्ययन का परिसीमाकंन

1. प्रस्तुत अध्ययन में प्रतिदर्श के रूप में शिक्षित एवं अशिक्षित अभिभावकों का चयन केवल मैनपुरी जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों से किया गया है।
2. प्रतिदर्श के रूप में 60 शहरी अभिभावकों एवं 60 ग्रामीण अभिभावकों का चयन किया गया है।
3. प्रस्तुत शोध अध्ययन में शिक्षित व्यक्तियों से तात्पर्य यह है कि जिसने न्यूनतम स्तर तक विद्यालयी शिक्षा अवश्य ग्रहण की हो तथा अशिक्षित व्यक्तियों से तात्पर्य यह है कि जिसने विद्यालयी शिक्षा नहीं ग्रहण की हो, भले ही उसे अक्षर का ज्ञान हो ।

शोध विधिः

प्रस्तुत शोध अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्शः प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श के रूप में 60 शहरी अभिभावकों तथा 60 ग्रामीण अभिभावकों को लिया गया है । 60 शहरी अभिभावकों में 30 शिक्षित अभिभावक तथा 30 अशिक्षित अभिभावक हैं और 60 ग्रामीण अभिभावकों में 30 शिक्षित अभिभावक तथा 30 अशिक्षित अभिभावकों को लिया गया है। न्यादर्श चयन के लिए Stratified Random Sampling विधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरणः प्रस्तुत शोध अध्ययन में डॉ एस वेंकटेशन द्वारा निर्मित उपकरण Parental Attitude Scale Towards Pre – School Education (PAS-PSE) का प्रयोग किया गया है। इसमें पूर्व विद्यालयी शिक्षा के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्ति से सम्बन्धित कुल 25 कथन दिये गये हैं। PAS-PSE एक 25 आइटम का Five point लिकर्ट टाइप रेटिंग स्केल है। Test – Re test Method से इस उपकरण का विश्वसनीयता गुणांक 0.83 पाया गया है। इस उपकरण की Face Validity विशेषज्ञों के द्वारा उच्च पायी गयी है।

सांख्यिकीय विधियाँ– एकत्रित प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी टेस्ट का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण तथा व्याख्या

शोध परिकल्पना 1 :– शहरी शिक्षित अभिभावकों एवं शहरी अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है ।

तालिका – 1

समूह	N	M	S.D.	M.D	oD	t	df	परिणाम
शहरी शिक्षित अभिभावक	30	73	4.75	3	1.08	2.76	58	सार्थक अन्तर हैं
ग्रामीण शिक्षित अभिभावक	30	70	4.10					

तालिका 1 से स्पष्ट है कि शहरी शिक्षित अभिभावकों की संख्या 30 ,मध्यमान 73 तथा प्रमाणिक विचलन 4.75 है तथा शहरी अशिक्षित अभिभावकों की संख्या 30, मध्यमान 70 तथा प्रमाणिक विचलन 4.10 है । दोनों माध्यों का अन्तर 3 तथा दोनो मध्यमानों के अन्तर की मानक त्रुटि 1.08 है । इन मानों से प्राप्त t का मान 2. 76 है । प्राप्त t का मान 0.01 स्तर पर सार्थकता के लिए t के मान 2.66 (df=58) से अधिक है। अतः शून्य परिकल्पना निरस्त हो जाती है तथा शोध परिकल्पना स्वीकृत हो जाती है ।

शोध परिकल्पना 2 – ग्रामीण शिक्षित अभिभावकों एवं ग्रामीण अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है ।

तालिका – 2

समूह	N	M	S.D.	M.D	oD	t	df	परिणाम
शहरी शिक्षित अभिभावक	30	68.5	4.52	3.5	0.93	3.75	58	सार्थक अन्तर हैं
शहरी अशिक्षित अभिभावक	30	65	4.20					

तालिका 2 से स्पष्ट है कि ग्रामीण शिक्षित अभिभावकों की संख्या 30, मध्यमान 68.5 तथा प्रमाणिक विचलन 4.52 है तथा ग्रामीण अशिक्षित अभिभावकों की संख्या 30, मध्यमान 65 तथा प्रमाणिक विचलन 4.20 है। दोनो माध्यों का अन्तर 3.5 तथा दोनों मध्यमानों के अन्तर की मानक त्रुटि 0.93 है। इन मानों से प्राप्त t का मान 3.75 है । प्राप्त t का मान 0.01 स्तर पर सार्थकता के लिये आवश्यक t के मान 2.66 (df=58) से अधिक है। अतः शून्य परिकल्पना निरस्त हो जाती है तथा शोध परिकल्पना स्वीकृत हो जाती है।

शोध परिकल्पना 3– शहरी शिक्षित अभिभावकों एवं ग्रामीण शिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति मे सार्थक अन्तर है।

तालिका – 3

समूह	N	M	S.D.	M.D	oD	t	df	परिणाम
शहरी शिक्षित अभिभावक	30	73	4.75	4.5	2.31	1.94	58	सार्थक अन्तर हैं
ग्रामीण शिक्षित अभिभावक	30	65.5	4.52					

तालिका 3 से स्पष्ट है कि शहरी शिक्षित अभिभावकों की संख्या 30, मध्यमान 73 तथा प्रमाणिक विचलन 4. 75 है तथा ग्रामीण शिक्षित अभिभावकों की संख्या 30, मध्यमान 68.5 तथा प्रमाणिक विचलन 4.52 है। दोनों माध्यों का अन्तर 4.5 तथा दोनों मध्यमानों के अन्तर की मानक त्रुटि 2.31 है। इन मानों से प्राप्त t का मान 1. 94 है। प्राप्त t का मान 0.05 स्तर पर सार्थकता के लिये आवश्यक t के मान 2.00 (df=58) से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत हो जाती है तथा शोध परिकल्पना अस्वीकृत हो जाती है।

शोध परिकल्पना.4– शहरी अशिक्षित अभिभावकों एवं ग्रामीण अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है।

तालिका – 4

समूह	N	M	S.D.	M.D	oD	t	df	परिणाम
शहरी शिक्षित अभिभावक	60	71.5	4.45	4.5	0.97	4.38	118	सार्थक अन्तर हैं
ग्रामीण शिक्षित अभिभावक	60	66.75	4.30					

तालिका 4 से स्पष्ट है कि शहरी अशिक्षित अभिभावकों की संख्या 30, मध्यमान 70 तथा प्रमाणिक विचलन 4.10 है तथा ग्रामीण अशिक्षित अभिभावकों की संख्या 30, मध्यमान 65 तथा प्रमाणिक विचलन 4.20 है। दोनों माध्यों का अन्तर 5 तथा दोनों मध्यमानों के अन्तर की मानक त्रुटि 2.73 है। इन मानों से प्राप्त t का मान 1. 83 है। प्राप्त t का मान 0.05 स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक t के मान 2.00 (df= 58) से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है तथा शोध परिकल्पना .05 स्तर पर अस्वीकृत की जाती है।

शोध परिकल्पना 5– शहरी अभिभावकों एवं ग्रामीण अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है।

तालिका – 5

समूह	N	M	S.D.	M.D	oD	t	df	परिणाम
शहरी शिक्षित अभिभावक	60	71.5	4.45	4.25	0.97	4.38	118	सार्थक अन्तर हैं
ग्रामीण शिक्षित अभिभावक	60	66.75	4.30					

तालिका 5 से स्पष्ट है शहरी अभिभावकों की संख्या 60, मध्यमान 71.5 तथा प्रमाणिक विचलन 4.45 है तथा ग्रामीण अभिभावकों की संख्या 60, मध्यमान 66.75 तथा प्रमाणिक विचलन 4.30 है। दोनों माध्यों का अन्तर 4. 25 तथा दोनों मध्यमानों के अन्तर की मानक त्रुटि 0.97 हैं। इन मानों से प्राप्त t का मान 4.38 है। प्राप्त t का

मान 0.01 स्तर पर सार्थकता के लिये आवश्यक t के मान 2-62 (df = 118) से अधिक है। अतः शून्य परिकल्पना निरस्त हो जाती है तथा शोध परिकल्पना स्वीकृत हो जाती है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये हैं:

1. शहरी शिक्षित अभिभावकों की पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति शहरी अशिक्षित अभिभावकों की तुलना में उच्च पायी गयी है।
2. ग्रामीण शिक्षित अभिभावकों की पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति ग्रामीण अशिक्षित अभिभावकों की तुलना में उच्च पायी गयी है ।
3. शहरी शिक्षित अभिभावकों तथा ग्रामीण शिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. शहरी अशिक्षित अभिभावकों तथा ग्रामीण अशिक्षित अभिभावकों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. शहरी अभिभावकों की पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति ग्रामीण अभिभावकों की तुलना में उच्च पायी गयी है।

संन्दर्भ

1. बर्क, लॉरा इ(2006): चाइल्ड डेवलपमेंट, एलन एण्ड बेकन पब्लिशर्स।
2. भावें, कमला (1983) : पूर्व प्राथमिक शिक्षा की समस्यायें और प्रवृत्तियॉ, दि. मैकमिलन कंपनी ऑफ इण्डियॉ लिमिटेड ।
3. मिलर, (1992) : पैरेन्टल एटीट्यूडस टूवार्डस इन्टीग्रेसन, टॉपिक इन अर्ली चाइल्डहुड स्पेशल एजूकेशन, वाल्यूम–12, नम्बर –2।
4. मुरलीधरन, आर तथा बनर्जी, उमा (1961) : ए गाईड बुक फॉर नर्सरी स्कूल टीचर्स , न्यू दिल्ली।
5. यबान्सी, दिलेर, एवं एजीटिमी वॉल्यूम (2009): पैरेन्टल एटीट्यूड टूवार्डस इंग्लिश एजूकेशन फॉर किण्डरगार्डन स्टूडेन्ट्स इन तुर्की, कस्तामोनू एजूकेशन जनरल, वॉल्यूम–7, नम्बर–1 ।
6. वेल्स एवं वो (2008) : अन्डरस्टैन्डिग द पर्सपेक्टिव ऑफ नार्थन अरापाहो प्री स्कूल पैरेन्टल एटीट्यूडस एण्ड बिलीपस रिगार्डिंग लैन्गवेएज रिवाइटलाइजेशन एण्ड कल्चर मेन्टीनेंस, डिजरटेशन एब्स्ट्रैक्ट इण्टरनेशनल, वाल्यूम–61, नम्बर–37।
7. वैंकटेशन पी एस (2002) : मैन्यूअल फॉर पैरेन्टल एटीट्यूड्स स्केल टूवार्ड्स प्री स्कूल एजूकेशन, वेदान्त पब्लिकेशन, लखनऊ ।
8. पाण्डे, लता. (2008) : पढ़ने की दहलीज पर, एनसीईआरटी, नई दिल्ली ।
9. पुष्करणा, नेहा (2010) : एवरी पोस्टकार्ड हैड स्टोरी टू टैल, टाइम्स ऑफ इण्डिया, 15 जुलाई 2010, नई दिल्ली।

हमारे लेखक

एल. मिश्रा
फ्लैट न. 69
अनुपम ग्रुप हाउसिंग सोसाइटी
वसुंधरा एनक्लेव
दिल्ली–110096

एस एस रावत
आचार्य, प्रौढ़ सतत् शिक्षा एवं प्रसार विभाग,
हे.न.ब.ग. विश्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल)
उत्तराखण्ड

पुष्पेन्द्र सोलंकी
5–ए–36, कुडी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड,
जोधपुर (राजस्थान.)

ब्रजेश कुमार वर्मा
2/25 आवास विकास कालोनी,
मैनपुरी
उत्तर प्रदेश

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

कार्यकारिणी समिति

अध्यक्ष
प्रो. भवानीशंकर गर्ग

उपाध्यक्ष
श्री सुधीर चटर्जी
श्री ए. एच. खान
डा. एल. राजा
डा. एम. एस. राणावत
सुश्री निशात फारूख

महासचिव
श्री के. सी. चौधरी

कोषाध्यक्ष
डा. मदन सिंह

संयुक्त सचिव

सह–सचिव
श्री एस. सी. खण्डेलवाल
डा. पी. ए. रेड्डी
डा. ओ.पी.एम. त्रिपाठी
श्रीमती इन्द्रा पुरोहित

सदस्य
श्री दुर्लभ चेतिया
श्री मृणाल पंत
डा. वी. रेघु
डा. एस. एल. शर्मा
प्रो. के. आर. सुशीले गौडा
श्रीमती राजश्री बिस्वास
प्रो. सरोज गर्ग
सुश्री उषा राय

सहयोजित सदस्य
श्री एच. सी. पारीख
प्रो. एस. वाई शाह
श्री रामेश्वर नीखरा
डा. डी. उमा देवी
श्री हरीश एस
डा. निर्मला नुवाल